संगिनी

SANGINEE : *Smile.. Stride.. Scintillate..*

Nalco Mahila Samiti
Quarterly Magazine
April-June 2019

From the Editor's Pen

Beauty is truth's smile
When she beholds her own face
In a perfect mirror
- Rabindranath Tagore

Dear All

The king of seasons "Basanta" the spring is in air with splashes of color everywhere. From red "Palasha" to the newly peeping leaves all are tinged with glorious color of love – love of nature. Silently it waits for the winter to hibernate so that it can breathe beauty. Pause and motion, pain & pleasure are pairs of nature. Truth in nature tries to teach those who have nothing to do with thorns must never attempt to gather flowers. "Sanginee" is that mirror which reflects a greater truth i.e., "The worth of Living is Giving" as life is veiled behind a colourful stroll of "Caring and Sharing". The pages of "Sanginee" resonate with erosion of mortal values of society, a bourgeoning burden on Earth. Poets & writers while ruminating over the age old values of our rich cultural past connect with the present age struggle, balance the harmony between nature and humanity relying upon the life example of good Samaritans who are trying to bring a change as does the spring. In Marian Wright Edeleman's words "You really can change the world if you think enough". Gandhiji also reverberated the feeling with the words "Be the change you want to see in the world". Mother Teresa too harped the same tune "I alone cannot change the world, but I can cast a stone across the water to create many ripples". Women like Mrs. Kamala Pujari have paved the way for others to be trend setters in a different way.

The poem based on Mother has evidently proved that the first sight, the first sound from the mother tongue and the first maternal touch that a neonate feels keep flowing within her with the gaiety of a mountain fountain. Mother's love is ultimate.

We are thankful to the eminent poet & writer Mrs. Prativa Satpathy for her contribution to Sanginee. The world, from the time immemorial, is in a whirl of wronged women-more sinned against than sinning. Waking alarm is sirened. Now is the time to say in Santha Kabi Bhima Bhoi's Way.

ପ୍ରାଣୀଙ୍କ ଆରତ ଦୁଃଖ ଅପ୍ରମିତ
ଦେଖୁଦେଖୁ କେବା ସହୁ
ମୋ ଜୀବନ ପଛେ ନର୍କେ ପଡ଼ିଥାଉ ଜଗତ ଉଦ୍ଧାର ହେଉ

Thus the translation of his poem for all those who do not know Odia – A priceless treasure to explore.

Hope this edition will turn a page in your life too .... Womb to tomb the journey is towards spark of light through caring and sharing with true love for humanity.

Love and Live
Live and Grow
Grow to Serve

Happy Vishuva Sankranti, Mahaveer Jayanti, Bihu, Good Friday, Budha Purnima, Raja Sankranti.

Preeti Roy Chand

Editor in Chief
Preeti Roy Chand

Editorial Board
Poonam Thakur
Shagufta Jabeen
Debjani Mishra

Co-ordinator
Sabita Patnaik

Design Concept
Aswini Sutar

ବସ୍ତ୍ରହରଣ ନୁହେଁ

ଶାଢ଼ିକୁ ନେଇ କେତେ ପୁରାଣ
କେତେ ଗୀତ ଗପ
ହେଲେ, ଶାଢ଼ି ଯେ କେବଳ ପ୍ରତୀକ !

ନ ହେଲେ
ଶାଢ଼ି ଉଲାରି ଦେଲେ
କେବଳ ଯେ ଆଘାତ ଅପମାନ ହୁଏ
ତା' ନୁହେଁ,
ନାରୀତ୍ୱ ଏକ ମର୍ଯ୍ୟାଦା, ଏକ ଗୂଢ଼ସତ୍ତା
ଯାହା ଖାଲି ଶରୀରରେ ନ ଥାଏ
ଥାଏ ନାରୀର ସ୍ୱପ୍ନରେ, କଳ୍ପନାରେ
ରକ୍ତରେ, ମେଦରେ, ସ୍ୱେଦରେ ଥାଏ ଅବଶ୍ୟ,
ଥାଏ ମାତୃତ୍ୱରେ, ଦେବୀତ୍ୱରେ ।

ଆଜି କେତେ କେଉଁଠି
ଦୁର୍ମଦ ଦୁଃଶାସନ
କେଉଁଠି ଛଳ ପ୍ରେମିକ ତ
କେଉଁଠି ମୂଢ଼ ସ୍ୱାମୀ
ବହୁବିଧ ବିକାରର ଧର୍ଷଣ ।
ଅଥଚ, ନାହିଁ, 'ସୁଦର୍ଶନ'ନାହିଁ ବି
'ଦକ୍ଷିଣବାହୁ ଉପାଡ଼ିବ' ଭୀମସେନ ।

ଆଜି ବିବସ୍ତାଠାରୁ ରକ୍ତଧାର
ରଜ-ରକ୍ତ ନୁହଁ
ହୃତ୍‌ପିଣ୍ଡରେ ଶରାଘାତର !
ବୃଥା ଯାହା ମୋର ସହିଷ୍ଣୁତା
ଦୀର୍ଘ ପଚିଶ ବର୍ଷ ଧରି
ନଈ ବାଲିରେ
ଜୀଅନ୍ତା ମୀନପରି ପବନ ଢୋକିବାର କଷ୍ଟ
ରଙ୍ଗୀନ ସୂର୍ଯ୍ୟାସ୍ତ ଯାଏଁ ବଞ୍ଚିଯିବାର
ଦୁଃସାହସ ।

ସଭାସଦ୍‌ଙ୍କ ଅଟ୍ଟହାସ
ଅପୋଗଣ୍ଡର ଚାତୁରୀ
ମଝିରେ ଚିରିଯାଉଚି ମୋର
ତ୍ରିଲୋକ ତ୍ରିକାଳ ବ୍ୟାପି
ମର୍ଯ୍ୟାଦାର ନୀଳାମ୍ବରୀ ଶାଢ଼ି ।

ପ୍ରତିଭା ଶତପଥୀ
ମାର୍ଫତ୍‌- ଡଃ. ଦେବାଶିଷ ପଟ୍ଟନାୟକ
୧, ଗ୍ରିନ୍‌ପାର୍କ, ପଟିଆ, ଷ୍ଟେସନ୍‌ରୋଡ଼,
ପୋ: କିଟ୍‌, ଭୁବନେଶ୍ୱର- ୨୪

"ମା"

"ମା' ସ୍ନେହ, ପ୍ରେମ, ଯତ୍ନ ଓ ତ୍ୟାଗର ପ୍ରତୀକ
"ମା' ସେ ଜନନୀ, ସେ ଭଗିନୀ, ସେ ଧରଣୀ ।

ତା ପଣତ କାନିର ଛାଇରେ ଏତେ ଶୀତଳତା
ଏଇ ଗ୍ରୀଷ୍ମର ତତଲା ଧାସରେ
ଅସ୍ତବ୍ୟସ୍ତ, ବୃକ୍ଷଲତା, ମାଟି ପାଣି ଧରିତ୍ରୀ
ହେଲେ ଯେଉଁ ଶୀତଳତା ତୋ ପଣତକାନିରେ ।

"ମା" ପୁଣିଥରେ ବଢ଼େଇ ଦିଅନ୍ତୁନି
ହଜାରେ ଗଣ୍ଡିପକା ତୋ ପଣତଟିକୁ
ଓଢ଼ଣୀ କରି ସାମ୍ନା କରିଥାଆନ୍ତି
ଦୁନିଆର ଏଇ ଉତ୍ତାପକୁ ।

"ମା" ତୋ ଶୀତଳ ଆଖିରେ ଏତେ ଗଭୀରତା
ବର୍ଷାର ଅମାନିଆ ଧାର ।

ଭିଜେଇଛି କେତେ ଯେ ମଣିଷକୁ
ହେଲେ ତୋ ଆଖିର ଚମକ
ଭିଜେଇ ଦେଇନି ମୋତେ ।

ମା'ର ପରଶ ପାଇ ଉଠେ ସନ୍ତାନ
ତାର ସେଇ ସ୍ନେହର ପରଶେ
ହସି ଉଠୁ ଦୁନିଆ
ସର୍ବେ ଭବନ୍ତୁ ସୁଖୀନଃ ।

ଶିଖା ନାୟକ, ଅନୁଗୁଳ

परोपकार सबसे बड़ा

हमारे वेदों व उपनिषदों में मानव के उच्च गुणों कों प्रतिष्ठित किया गया है जिसमें परोपकार को प्रमुखता दी गई है। तुलसीदास ने अपने दोहे में कहा है -

‘परहित सरिस धरम नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहिं अधमाई॥

इसी परोपकार की भावना से जो मनुष्य कार्य करता है वह देवरूप को धारण करता है। यही मानव का सबसे बड़ा धर्म है।

200 ई. पू. जब पूरा संसार युद्ध में रत था, साम्राज्य लाशों के ढेर पर स्थापित किए जाने लगे, मानव धन व ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए मानव धर्म का गला घोटने लगा तभी महात्मा बुद्ध का प्रादुर्भाव हुआ। उन्होंने सभी को प्राणी व मानव के प्रति प्यार, दया, अहिंसा का भाव रखने को प्रेरित किया। उन्होंने जीवन के मूल्यों को पुन: स्थापित किया। हर युग को महात्मा बुद्ध की आवश्यकता होती है जो मानव को उचित व अनुचित का बोध कराए और उसका मार्गदर्शक बने।

आज के युग में स्वार्थ-लोलुपता बढ़ती जा रही है। लोग एक दूसरे की सहायता करने में संकोच करने लगे हैं और इसमें वे समय व धन की व्यर्थता समझते हैं जिससे समाज हृदय विहीन बनता जा रहा है। बुजुर्गो का सम्मान घटता जा रहा है। लोग माता-पिता को बोझ समझने लगे हैं, जो सभी के लिए सबसे बड़ा कलंक है। जहाँ बुजुर्गों को सम्मान व प्यार नहीं मिलता हैं उस घर में खुशियाँ कोसों दूर चली जाती हैं।

आज भौतिक सुख व ऐश्वर्य की चाहत में मनुष्य आदर्श व सद्गुणों को भूलता जा रहा है जो एक गंभीर स्थिति पैदा कर देगा। आज विज्ञान कितनी भी उँचाइयों पर पहुँच गया हो, किंतु उच्च गुणों के बिना सब महत्वहीन व अस्तित्वहीन है। विज्ञान तो सिर्फ भौतिक सुख व सुविधाएँ ही प्रदान कर सकता है परंतु आदर्श व उच्च मानवीय गुणों से वह आत्मिक सुख, शांति प्राप्त कर सकता है।

हर मनुष्य एक आदर्श समाज में सुख-शांति से रहना चाहता है। अच्छे नागरिक से ही अच्छे समाज का निमार्ण होता है। हमें अपने बच्चों व युवाओं को परोपकार के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। बच्चों को नैतिक मूल्यों की शिक्षा दी जानी चाहिए।

स्कूलों में अच्छे कार्यों और नि:स्वार्थ किए गए कार्यों के लिए सम्मानित व पुरस्कृत किया जाना चाहिए ताकि दूसरे बच्चे भी उनसे प्रेरित हो कर समाज में आदर्श स्थापित कर सकें। महापुरुषों के महान कथनों को बच्चों के सामने चर्चा की जानी चाहिए ताकि उनका मनोबल बढ़ाया जा सके व प्रोत्साहित किया जा सके। इन सब कुछ ठोस कदमों से हमारे समाज का निश्चय ही परिवर्तन होगा और हम एक स्वस्थ व आदर्श समाज की स्थापना कर पाएँगे।

आज के युग में भी न जाने कितने लोग निरंतर समाज सेवा में तत्पर हैं।

इनमें सें एक प्रमुख कैलाश सत्यार्थी हैं जिन्हें शांति पुरस्कार मिल चुका है। उन्होनें नि:स्वार्थ रूप से समाज के लिए अनेक कार्य किए। ये हमारे समाज के लिए प्रेरणा हैं। परोपकार से जो प्राप्ति होती है, वह अन्य से नहीं हो सकती हैं। परोपकार से सकरात्मक ऊर्जा की प्राप्ति होती है जो हमें चिन्मय आनंद व सुख प्रदान करती है, जिससे हमें आत्मबल प्राप्त होता है। मैथिलीशरण गुप्त ने अपने शब्दों में बखूबी वर्णन किया है -

‘वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिए मरे’

कामना सिंह, भुवनेश्वर

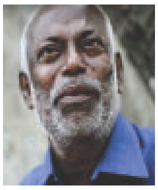

श्री डी. प्रकाश राव, कटक के ‘चाय-वाला’ के नाम से मशहूर, जिन्हें भारत गणराज्य के चौथे सबसे बड़े नागरिक सम्मान पद्मश्री पुरस्कार से सम्मानित किया गया है। श्री राव एक चाय की दुकान चलाते हैं तथा झुग्गी-बस्ती में रहने वाले बच्चों के विकास के लिए अथक कार्यरत हैं। वे कटक शहर की झुग्गीबस्ती में रहने वाले सुविधाओं से वंचित बच्चों के लिए आशा ओ आश्वासना के नाम से एक प्राथमिक स्कूल चलाते हैं।

केन्दुझर जिले के **श्री दैतारी नायक** ने अपने सामाजिक कार्य के लिए पद्मश्री पुरस्कार प्राप्त किया है। उन्होने अकेले ही अपनी कृषि के लिए पहाड़ के झरने से 3 किलोमीटर लम्बी नहर की खुदाई करने की जिम्मेदारी उठाई थी।

श्रीमती कमला पुजारी, कोरापुट जिले में पात्रपुट गांव की एक आदिवासी महिला है, जिसे कृषि के क्षेत्र में योगदान देने, विशेष तौर पर जैविक कृषि के प्रोत्साहन के लिए पद्मश्री पुरस्कार मिला है। मूलभूत शिक्षा के बिना कमला अब तक 100 प्रकार के धान की किस्मों को परिरखित करने में समर्थ हुई है।

साझा और परवाह

साझा और परवाह दोनों परस्पर परिपूरक हैं। अर्थात् ये जीवन का मूलमंत्र हैं। हम सभी किसी ना किसी तरह इसे जुड़े हैं। साझा का अर्थ है परवाह करना और परवाह का अर्थ है जिम्मेदारी, खुशी और प्रेरणा!

एक छोटे बच्चे में भी ये भावना उत्पन्न कराने की कोशिश में माता-पिता जुट जाते हैं। इसकी शुरूआत होती है खिलौने बाँटने से। बच्चे के मन में ये बात खटकती है कि वो अपनी चीजें दूसरों को क्यों दे। पर जब वह सामने वाले की खुशी देखता है तब उसे साझा के महत्व की समझ आती है। इसी तरह इंसान के जीवन में कई पड़ाव आते हैं। दोस्तों से, सह-कर्मियों से, परिवार जनों से तथा परिजन से अपने विचार, भावनाएँ एवं भौतिक वस्तुएँ इत्यादि बाँटना या साझा करना और उसके फलस्वरूप मिलनेवाली खुशी, खुशी उदारता की, समझदारी की, प्रेरणा की तथा कामयाब की।

जरूरतमंद को जब हम अपने पुराने और काम में न आने वाली वस्तुएँ देते हैं, वह चीज उस वंचित के लिये नई और काफी महत्वपूर्ण होती है। इसके अलावा जब हम किसी विकलांग के साथ कीमती समय व्यतीत करते हैं, धैर्यपूर्वक उसे समझते हैं। तब इन सबसे उन लोगों की खुशी की कल्पना मात्र से हमारे हृदय को जो खुशी मिलती है वह साझा और परवाह के भाव को जीवित रखती है।

माता-पिता, भाई-बहन, पति-पत्नी या कोई और जिनसे एक इंसान अपने मन के भाव, सुख-दुख, परेशानी बाँट सकता है। ये भी एक तरह का साझा और परवाह है क्योंकि जब हम अपने भाव व्यक्त करते है। तब हमारे मन का बोझ हल्का हो जाता है और सामने वाले से मिली सांत्वना, परेशानी का हल या उसके साथ से ही जो खुशी दोनों को मिलती है यही है साझा और परवाह।

इन सबसे यह निश्चित है कि इस कथन के लिये हमें किसी शिक्षा संस्थान की जरूरत नहीं। यह जाने अनजाने स्वत: ही हमारे ज़ेहन में होते हैं।

आज दुनिया भर में कई ऐसे कार्यक्रम और योजनाएँ प्रचलित हैं जो इस कथन साझा और परवाह की नींव रखते हुए इसे किसी ना किसी माध्यम से जीवित रखते हैं। लोग इसमें बढ़-चढ़कर हिस्सा लेते हैं।

यह पढ़कर अगर आपके चेहरे पर भी हल्की मुसकुराहट आई है तो साझा और परवाह सिद्ध है।

संगीता अग्रवाला, अनगुल

गिनतियाँ ठीक से सीखी नहीं, मगर इतना मालूम है कि बाँटने से बढ़ती हैं खुशियाँ!

एक जगह सेमिनार चल रहा था, जिसमें करीब 50 लोग उपस्थित थे। सभी वक्ता की बात बहुत ध्यान से सुन रहे थे। अचानक वक्ता चुप हो गया और उपस्थित लोगों को गुब्बारे बाँटने लगा। उन्होंने सभी को एक-एक गुब्बारा दिया। फिर उन्होंने सभी से गुब्बारों पर मार्कर से अपना-अपना नाम लिखने को कहा।

जब सभी ने गुब्बारों पर नाम लिख दिया, तो वक्ता ने उन्हें दूसरे कमरे में रख दिया। इसके बाद वक्ता सभी को गुब्बारे वाले कमरे में ले गये और उनसे पाँच मिनट के भीतर अपना नाम लिखा हुआ गुब्बारा खोजने को कहा। वक्ता का इतना कहना था कि गुब्बारों से भरे उस कमरे में हलचल सी मच गयी। अपने गुब्बारे को जल्द से जल्द खोजने की चाहत में श्रोताओं को ध्यान ही नहीं रहा कि वे एक-दूसरे को धक्का दे रहे हैं। शोर चरम पर पहुँच गया था, लेकिन पाँच मिनट बाद भी सभी के हाथ खाली थे। कोई अपना गुब्बारा खोज नहीं पाया।

एक बार फिर श्रोताओं को पाँच मिनट दिये गये, लेकिन नियम बदल दिये गये थे। इस बार श्रोताओं से कहा गया कि उनके हाथ में जो भी गुब्बारा आये, उस पर लिखे नाम वाले व्यक्ति को वह गुब्बारा दे दें। एक मिनट के भीतर सभी के हाथों में अपना-अपना गुब्बारा था।

इस कवायद के बाद वक्ता ने फिर बोलना शुरू किया। उन्होंने कहा, ठीक यही स्थिति हमारे जीवन की भी है। बिना यह जाने कि खुशी कहाँ है, हम उसे चारों तरफ अधीर होकर खोजने लगते हैं। हकीकत में हमारी खुशी दूसरे लोगों की खुशियों में छिपी होती है। आप दूसरों को खुशियाँ बाँट कर तो देखिये, आपको आपके हिस्से की खुशी खुद-ब-खुद मिल जाएगी। मानव जीवन का लक्ष्य भी यही है। हमारी आत्मा ही सत् चित आनंद है। इसमें अपार खुशियाँ हैं और ये उस ईश्वर से आती हैं, जो खुशियों का कभी न खत्म होने वाला स्रोत हैं। दूसरों को खुशियाँ बाँटने से अपार संतुष्टि मिलती है। क्या आप भी जीवन में इसी खुशी को नहीं खोज रहे ?

सीमा सिंह
अनुगुल

ମାନବୀୟ ଚିନ୍ତାଧାରାର ଅବକ୍ଷୟ- ଏକ ଅନୁଶୀଳନ

ପରିବାର ବିଶ୍ୱର ସର୍ବପୁରାତନ ଅନୁଷ୍ଠାନ ଏବଂ ମାନବର ଶ୍ରେଷ୍ଠକୃତି, ବଣ ମଣିଷରୁ ବୈଦିକ ଯୁଗ ଏବଂ ବୈଦିକ ଯୁଗରୁ ଆଧୁନିକ ଯୁଗଯାଏ ଯାହାର ବ୍ୟାପ୍ତି। ଏହାର ଉନ୍ମେଷ, ବିକାଶ ଅତ୍ୟନ୍ତ ରୋମାଞ୍ଚକର। ଏହାର ସୃଷ୍ଟି ଓ ସ୍ଥିତି ଅତ୍ୟନ୍ତ ରହସ୍ୟମୟ। ଭୌଗୋଳିକ ପରିବେଶ ଓ ପରିସ୍ଥିତିରେ ଏହାର ସଂଜ୍ଞା ଅପରିବର୍ତ୍ତିତ। ଭାଷା, ଭାବ ଓ ସଂସ୍କୃତିର ପରିବର୍ତ୍ତନ ଏହା ଉପରେ କୌଣସି ପ୍ରଭାବ ପକାଇ ପାରିନାହିଁ। ଜାତି-ଅଜାତି ଓ କଳା ଗୋରା ଭେଦଭାବରେ ମଧ୍ୟ ଏହା ପୂର୍ବବତ୍ ଅମ୍ଳାନ। ଏହା ଅତ୍ୟନ୍ତ ପବିତ୍ର। ମାତ୍ର ଜନସଂଖ୍ୟାର ବିସ୍ଫୋରଣ, ଆତ୍ମକୈନ୍ଦ୍ରିକ ମନୋଭାବ, ପାର୍ଥିବ ଜଗତ ପ୍ରତି ଅତ୍ୟନ୍ତ ଆକର୍ଷଣ ଇତ୍ୟାଦି ଅତ୍ୟାଧୁନିକ ମଣିଷକୁ ଅବକ୍ଷୟମୁଖୀ କରିଛି, ଏହାଦ୍ୱାରା ବୈକୁଣ୍ଠ ସମାନ ପରିବାର ଓ ସମାଜ ଆଜି ପ୍ରଭାବିତ ହୋଇଛି। ସୁଦୂର ଅତୀତରେ ଗୋଷ୍ଠୀ ସଂଘର୍ଷ, ଯୁଦ୍ଧ, ମନୋମାଳିନ୍ୟ ଆଦି ପରିବାରର ସଂଜ୍ଞାକୁ ପ୍ରଭାବିତ କରିପାରୁ ନ ଥିଲା। ସମ୍ପ୍ରତି ମାନବର ଦୁର୍ବାର ସ୍ୱପ୍ନ, ବଡ଼ ହେବାର ଅକଳ୍ପନୀୟ ସ୍ୱାର୍ଥାନ୍ୱେଷୀ ଚିନ୍ତାଧାରା, ବ୍ୟକ୍ତି କୈନ୍ଦ୍ରିକ ଭାବଧାରା ଇତ୍ୟାଦି ଯୌଥ ପରିବାରର ସମାଧି ଉପରେ ଠିଆ କରାଇଛି ମିଲେନିୟମ୍ କ୍ଷୁଦ୍ର ପରିବାରବାଦ।

ପରିବାରରେ ପରସ୍ପର ପ୍ରତି ସ୍ନେହ, ଶ୍ରଦ୍ଧା ଓ ଆନ୍ତରିକତା ଭରି ରହିଥାଏ। ଫଳରେ ପରିବାର ସର୍ବଦା ଆନନ୍ଦମୁଖରିତ ହୋଇଉଠେ। ଏବେ ପରିବାର ହିଂସା, ଦ୍ୱେଷ ଓ କଳହରେ ଭରପୁର। ଏଥିପାଇଁ ଦାୟୀ କିଏ? ଏବେ ପାରିବାରିକ ଜୀବନ ମଧୁମୟ ପରିବର୍ତ୍ତେ ବିଷମୟ ହୋଇଯାଇଛି। ପୂର୍ବକାଳରେ ଯୌଥ ପରିବାର ଥିଲା। ସଦସ୍ୟମାନେ ପରସ୍ପରର ସୁଖଦୁଃଖରେ ସାଥୀ ଥିଲେ। ଏପରିକି ଗାଁରେ ମଧ୍ୟ ପରିବାର ପରିବାର ଭିତରେ ଭଲ ସମ୍ପର୍କ ଥିଲା। ପରସ୍ପରକୁ ସାହାଯ୍ୟ କରି, ପରସ୍ପର ଉପରେ ନିର୍ଭରଶୀଳ ରହି ଅତି ସୁନ୍ଦର ଓ ସୁବିଧାରେ ପରିବାର ଚାଲୁଥିଲା।

ସମୟର ପରିବର୍ତ୍ତନରେ ତାଳଦେଇ ଆମେ ଆଗକୁ ଆଗକୁ ମାଡ଼ି ଚାଲିଛୁ। କିନ୍ତୁ ଆଜିର ପାରିବାରିକ ଜୀବନର ଆଦର୍ଶ ଅଧୋଗତିର ଚରମସୀମାରେ ପହଞ୍ଚିସାରିଛି। ଯେଉଁ ପରିବାରରେ ଆଦାନ-ପ୍ରଦାନର ମନୋଭାବ ନେଇ ସଦସ୍ୟମାନେ ଶାନ୍ତିମୟ ଜୀବନଯାପନ କରୁଥିଲେ, ବୟସ୍କମାନେ ସସମ୍ମାନ ଜୀବନ ବିତାଉଥିଲେ, ତା'ର ଆଜି ଅବକ୍ଷୟ ହୋଇଛି। ବିଦେଶୀ ଶିକ୍ଷା, ଆଇନ୍‌କାନୁନ୍, ପୋଷାକ ପରିଚ୍ଛଦ, ସର୍ବୋପରି ବିଦେଶୀ ଜୀବନଶୈଳୀକୁ ଆପଣାଇ କରି ପାରିବାରିକ ତଥା ସାମାଜିକ ଜୀବନକୁ ଅବହେଳା କରାଯାଉଛି।

ବୈକୁଣ୍ଠ ସମାନ ଆହା ଅଟେ ସେହି ଘର, ପରସ୍ପର ସ୍ନେହ ଯହିଁ ଥାଏ ନିରନ୍ତର। ବୈଦିକ ଭାଷାରେ ବସୁଧୈବ କୁଟୁମ୍ବକମ୍, ଅର୍ଥାତ୍ ଆମେ ସମସ୍ତେ ବିଶ୍ୱବାସୀ ଗୋଟିଏ କୁଟୁମ୍ବ ଅର୍ଥାତ୍ ଗୋଟିଏ ପରିବାର। ପରିବାର ଆଗକୁ ବଢ଼େ ସମସ୍ତଙ୍କ ସ୍ନେହଶ୍ରଦ୍ଧା, ତ୍ୟାଗ, ସେବା ଓ ଅତୁଟ ଭଲ ପାଇବାର ବନ୍ଧନରେ। ସୁଖଦୁଃଖ, ଝଡ଼ଝଞ୍ଜା ଭିତରେ ପାରିବାରିକ ମୂଲ୍ୟବୋଧ ବଜାୟ ରହିଥାଏ, ବର୍ତ୍ତମାନ ପାଶ୍ଚାତ୍ୟ ସଂସ୍କୃତିର ମାୟାରେ ପରିବାର ଭାଙ୍ଗି ଯାଇଛି, ଉଚ୍ଚଶିକ୍ଷା ଲାଭକରି ପିଲାଙ୍କ ଲକ୍ଷ୍ୟ ରହିଲା ଭଲ ଚାକିରୀ କରି ମୋଟା ଅଙ୍କର ଦରମା ପାଇ ସମାଜରେ ପ୍ରତିଷ୍ଠିତ ହେବା। ଏହାଦ୍ୱାରା ପିଲାମାନେ ଘର ଛାଡ଼ିଲେ, ଛାଡ଼ିଲେ ପିତା ମାତାଙ୍କୁ। ଜେଜେ ବାପା, ଜେଜେ ମା, ବଡ଼ ବାପା, ବଡ଼ ମା, ଦାଦା, ଖୁଡ଼ୀ ଇତ୍ୟାଦିଙ୍କ ଅତୁଟ ସ୍ନେହ ମମତା ଡୋରରେ ବନ୍ଧା ହୋଇଥିବା ଯୌଥ ପରିବାର ଭାଙ୍ଗିଗଲା। ସହଯୋଗ ଓ ଯତ୍ନର ଅର୍ଥ ରହିଲା ନାହିଁ। ପିଲାମାନେ ରହିଲେ ସୁଦୂର ସହରରେ, ଘରେ ପଡ଼ି ରହିଲେ ଦୁଃସ୍ଥ ପିତାମାତା।

ମହାନ୍ ଭାରତୀୟ ସଂସ୍କୃତିରେ ଘରର ବରିଷ୍ଠମାନଙ୍କୁ ଦେବତୁଲ୍ୟ ମନେ କରାଯାଉଥିଲା। ପିତାମାତାଙ୍କ ସ୍ନେହ ଆଦରର ବଳୟ ମଧ୍ୟରେ ସନ୍ତାନ ସନ୍ତତି ଖୁବ୍ ଆରାମରେ ଆଶ୍ରୟ ନେଉଥିଲେ। ବର୍ତ୍ତମାନ ସମାଜରେ ସେମାନଙ୍କୁ ହତାଦର କରାଯାଉଛି। ତାଙ୍କ ହାତଧରି ବାଟଚାଲି ଶିଖିଥିବା ପୁତ୍ରକନ୍ୟାଗଣ ସେମାନଙ୍କୁ ହତାଦର କରୁଛନ୍ତି, ଜରାନିବାସକୁ ପଠାଇ ଦେଉଛନ୍ତି। ଆଗାମୀ ପୀଢ଼ି ଆମଠୁ ଶିଖିବେ କ'ଣ? ଟେକ୍ନୋଲୋଜି ଆଜି ସମସ୍ତଙ୍କୁ କମ୍ପ୍ୟୁଟର, ଲାପ୍‌ଟପ୍, ମୋବାଇଲ୍, ହ୍ୱାଟସ୍‌ଆପ୍ ଇତ୍ୟାଦିର ଚକ୍ରବ୍ୟୁହ ଭିତରେ ପେଶି ଦେଉଛି।

ପରିବାର ଭିତରେ ଟିକିଏ ହୋହଲ୍ଲା, ଟିକିଏ ମାନ ଅଭିମାନ ନିଶ୍ଚୟ ଥାଏ, କିନ୍ତୁ ଯେଉଁ ପରିବାରରେ ଶିଶୁମାନଙ୍କଠୁ ଆରମ୍ଭ କରି ବୟସ୍କ ବ୍ୟକ୍ତି ଅର୍ଥାତ୍ ଜେଜେ, ଜେଜେମା' ଇତ୍ୟାଦି ଥାଆନ୍ତି, ସେଠି ମତାନ୍ତର ବେଶୀ ସମୟ ରହିପାରେ ନାହିଁ। ପିଲାମାନେ ସମସ୍ତଙ୍କ ପ୍ରିୟଭାଜନ ହୋଇଥାଆନ୍ତି। ପରିବାରର ପୁରୁଖା ଲୋକଙ୍କୁ ସେମାନେ ସାହାଯ୍ୟ କରିଥାନ୍ତି। ଧରନ୍ତୁ ପରିବାରର କୌଣସି ବୟସ୍କ ବ୍ୟକ୍ତି ବଜାରରୁ ଜିନିଷପତ୍ର ଆଣିଲେ, ସେ ଘରକୁ ପହଞ୍ଚିଲାମାତ୍ରେ କୌଣସି ପିଲା ତାଙ୍କ ହାତରୁ ଜିନିଷ ନେଇ ଥୋଇଦେବ, ସେତେବେଳେ ସେଇ ବୟସ୍କ ବ୍ୟକ୍ତି କେତେ ଆଶ୍ୱସ୍ତ ହୋଇଥାଆନ୍ତି। ଏହା କେବଳ ଶ୍ରମକୁ ଲାଘବ କରିବାର ପ୍ରଚେଷ୍ଟା ନୁହେଁ, ଏହାଦ୍ୱାରା ଏକ ଭାବନାତ୍ମକ ପ୍ରଭାବ ପଡ଼ିଥାଏ। ପିଲାଙ୍କ ସୁନ୍ଦର ସରଳ ନିଷ୍କପଟ ମୁଖମଣ୍ଡଳ ବୟସ୍କମାନଙ୍କ କ୍ଳାନ୍ତି ଲାଘବ କରେ। ବେଳେ ବେଳେ ବୃଦ୍ଧ ଓ ଯୁବକ ଉଭୟ ଆଳସ୍ୟ ପରାୟଣ ହୋଇଥାଆନ୍ତି, ସେତେବେଳେ ଘରର ଛୋଟପିଲାମାନେ କିଛି କାମ କରିଦିଅନ୍ତି। ସେମିତି ପରିବାରରେ ପିଲାଙ୍କ ଦେହ ଖରାପ ହେଲେ, ରାତି ଅନିଦ୍ରା ହୋଇ ବୟସ୍କମାନେ ହିଁ ଜଗିଥାଆନ୍ତି। ସେତେବେଳେ ଜେଜେ ମା ଓ ଜେଜେ ବାପାଙ୍କ ସ୍ନେହଭରା ହାତ ଆଉଁସା ଅତି ଆରାମ ଦାୟକ ଲାଗେ। ଛୋଟ ପିଲାଙ୍କୁ ଛୋଟ ଛୋଟ କାମ କରିବାର ଅଭ୍ୟାସରେ ପକାଇବା ଦ୍ୱାରା ସେମାନଙ୍କର ଶ୍ରମପ୍ରତି ଆଗ୍ରହ ତଥା ସମ୍ମାନ ବଢ଼ିଥାଏ।

ପରିବାର ହେଉଛି ବ୍ୟକ୍ତିପାଇଁ ସବୁଠାରୁ ସୁନ୍ଦର ଓ ସୁରକ୍ଷିତ ଆଶ୍ରୟସ୍ଥଳ।

ଯେଉଁ ପରିବାରରେ ପରସ୍ପର ମଧ୍ୟରେ ଉତ୍ତମ ସମ୍ପର୍କ ଥାଏ, ମୁରବିପଣିଆକୁ ଗୁରୁତ୍ୱ ଦିଆଯାଏ, ବୃଦ୍ଧ ପିତାମାତାଙ୍କ ପ୍ରତି ସହାନୁଭୂତି ପ୍ରଦର୍ଶନ କରାଯାଏ, ସର୍ବୋପରି ଉତ୍ତମ ବୁଝାମଣା ଥାଏ, ସେ ପରିବାର ଏକ ଆଦର୍ଶ ପରିବାର। ସେହି ମୂଲ୍ୟବୋଧକୁ ଅନୁଭବ କରି ପରିବାରର ସମ୍ମାନ, ସଂସ୍କାର ଓ ପରମ୍ପରାକୁ ଉଜ୍ଜୀବିତ କରି ରଖିବାକୁ ଚେଷ୍ଟା କରିବାକୁ ସମସ୍ତେ ପ୍ରତିଜ୍ଞାବଦ୍ଧ ହେବା ଉଚିତ। ଏଥିପାଇଁ ସାମୂହିକ ସହଯୋଗର ଏକାନ୍ତ ଆବଶ୍ୟକତା ରହିଛି। ଆସନ୍ତୁ ସମସ୍ତେ ମିଳିମିଶି ଆମ ଆଦର୍ଶ ପରିବାରକୁ ଫେରାଇ ଆଣିବା।

ସ୍ୱଚ୍ଛ ପାରିବାରିକ ଜୀବନ ମଣିଷକୁ ବିଶ୍ୱ ଭାବନାନୁଖୀ କରିଥାଏ। ପରିବାର ଆଧାରରେ ନଗର, ରାଜ୍ୟ, ଦେଶ ଏବଂ ସର୍ବୋପରି ବିଶ୍ୱଭାବନା ଜାଗ୍ରତ ହୁଏ। ପରିବାରର ସଦସ୍ୟମାନଙ୍କ ମଧ୍ୟରେ ଶ୍ରଦ୍ଧା, ସ୍ନେହ, ଭଲପାଇବା, ଆପଣାପଣର ଭାବ, ସାହାଯ୍ୟ-ସହଯୋଗ, ସହଭାଗିତା ପରିବାରକୁ ସୁଦୃଢ଼ କରେ। ଏକମନ, ଏକ ପ୍ରାଣ ହୋଇ ପରସ୍ପର ପରସ୍ପରର ସୁଖରେ ସୁଖୀ ଓ ଦୁଃଖରେ ଦୁଃଖୀ ହୋଇପାରିଲେ ପରିବାରରେ ସୁଖଶାନ୍ତି ଆନନ୍ଦର ବାରିଧାରା ବରଷି ଯାଏ। ଜୀବନର ପରବର୍ତ୍ତୀ ପର୍ଯ୍ୟାୟରେ ସଦସ୍ୟମାନେ ଉତ୍ତମ ନଗରବାସୀ, ରାଜ୍ୟବାସୀ, ଦେଶବାସୀ ଏବଂ ସର୍ବୋପରି ଉତ୍ତମ ବିଶ୍ୱବାସୀ ବୋଲାଇପାରନ୍ତି।

ସସ୍ମିତା ମହାନ୍ତି, ଅନୁଗୁଳ

संतकवि भीम भोई जी की ब्रह्मलेखनी से स्तुति चिन्तामणि, सप्तबिंश बोली

बखानो महिमा, धुनि की स्थापना, श्रीमुख से आज्ञा दिये।
दास जैसा क्रय, करके आधे राह मुझे ऐसा क्यों किये ?।1।
न मेरा भरोसा, उड़ाया साहस, कैसी बुद्धि करूँ कहो।
जगत सम्भालो, भक्त रक्षा करो, अपना बोझ आप उठाओ।2।
भक्तों के दु:ख, निरन्तर देखो, लगा पाद अरविन्द।
जुगाड़ के बाँधो, आगे-पीछे कन्धे, वहन करो सानन्द।3।
संपत्ति विपत्ति, मुक्ति दुर्गति, सृष्टि कर लिये जोड़ि।
पाप दु:ख भार, कौन उठाएगा, पैरों तले गड़गड़ी।4।
विजय किये हो, क्यों न जानत, भाग जाऊँ मैं कहाँ।
अर्जित स्वपाप, भार प्रसारित, पदतल रखूँ साहा।5।
शरण वांच्छित, रोते-रोते भक्त, सब हुए भूमिगत।
दोष अपराध, क्षमा करो उसका, पालन करो जाग्रत।6।
प्राणियों के आर्त्त, दु:ख अप्रमित, देखकर कौन सहे।
भले मेरी जान नरक में जाय, जगत उद्धार हुए।7।
बता रहा हूँ मैं, भक्तिभाव ब्रह्म, अहो महिमा अनन्त।
तीनों ब्रह्माण्ड में, जितने भी जीव, सब तुम्हारे भक्त।8।
नव लक्ष तारा, सुराट, विराट, ध्रुव लोक आदि जो भी।
समस्त तुम्हारा, पादपद्माश्रित, ठुल शून्य श्रीसुरभि।9।
ठुल शून्योपरि, अनन्त बिहारी, और कुछ नहीं देखा।
अविकार ब्रह्म, अरूप अनाम, सिन्धु प्राय रुपरेखा।10।
कैसा दुष्ट सन्त, सेवक सामन्त, कीट पतङ्ग संपूर्ण।
कोई कम नहीं, तुम पूर्ण साँई, सर्वघट में समान।11।
मेदिनी, पाषाण, काष्ठ तरुतृण, निज वरदान वृक्ष।
मैं जानता हूँ, मन के भीतर, शब्दब्रह्म सा निष्पक्ष।12।
मैं हूँ मूर्खकवि, भेदमार्गरवि, तेरे ही करुणामात्र।
सर्वसम देखा, सत्यधर्म सखा कर न सका भागित।13।
त्रिपुर जगत, जीव यातायात, जोभि नाम काल चिन्ह।
सभी को प्यार से, एक आत्मा जैसे, मत करो भिन्नाभिन्न।14।
लकड़ी के भीतर, सुढल धातु में, जलपरिपूर्ण जितने।
प्राणी अङ्ग में, जीव परम रूप, प्रस्फुटित देखा उतने।15।
दोष कृत हानि, लाभ मारधर, गाली द्वन्द होते वहाँ।
रूपचर्म भेद, कटा देह सद्य, भयभीत मन हुआ।16।
आग चूल्हा पर, रसोई पात्र में, जैसे टपकता अन्न।
ठीक उसी तरह, दिल उठापटक, पंचभूत आत्मामन।17।
एक खण्ड हड्डी, एक बूँद खून, एक टुकड़ा माँस जाना।
इसीलिये तो मुझे, जीवों के दु:ख, बड़े कठिन सहना।18।
एक तलवार, दस पाँच सिर, काटे भारत युद्ध में।
दूसरों को मार, करो तो प्रहार, मेरा अंग रोये कष्ट में।19।
आत्मा भगति में, दोषादोष हो तो, वज्रपात हो मेरे सिर।
बोले भीमभोइ, ब्रह्मशाप देके, जलादो मेरा शरीर।20।

अनुवादक : **श्रीमंत साहु**

When will 'We' replace 'I'

In this materialistic and non-humanitarian world, it is the human relations which are bearing the brunt of self-centeredness, self obsession and selfishness. It is frightening to even imagine that, before humans disappear from this earth, it is human relations and emotions that would die a pre-mature death. We are so blindfolded that, we don't see beyond 'I'.

Why does it become so difficult to lend a helping hand? Why doesn't one's heart go out to others? You never know, when your place would be shifted and you will be at the receiving end. We have built cocoons around us, aloof from the miseries of others in this world. As an exception, the cocoon accommodated only our family members.

Is the entire world not our family? Don't we share a basic relationship by virtue of being humans? Is that not enough to strike the humanitarian cord in your heart? The answers maybe finite, but not the questions.

Selfless service to mankind is the greatest worship to GOD. Anyone can be sympathetic, but just being sympathetic doesn't serve the purpose. In order to impact the lives of the downtrodden in the society, empathy should join sympathy.

We have many examples in the world of ..... persons who have struck their intrinsic humanitarian chords at the right time, promoted philanthropic philosophy relentlessly and managed to keep alive the noble idea/thought that 'WE' should come before 'I'. From Mother Teresa, to Bill Gates, Azim Premji, Tatas etc., the list goes on and on. Can't we emulate their philanthropic bent of mindset at least to an extent of 0.01%? If anyone sheepishly thinks that, since they are extremely rich and belong to the elite class, some amount of charity hardly burns a hole in their pockets, I would feel pity for mental state of mind. It's not the quantum or the monetary value of charity that counts, it is the intrinsic noble thought to come forward to care and serve people that really matters. To further foster my point, I would like to quote the recent example of Shri Devarapalli Prakash Rao. He is a small time tea-vendor of Cuttack, but half of his earnings are earmarked for charity. His deeds have been paid off; his selfless service has been recognized by the Government of India and he has been conferred with the Padma Shri. In fact, the recognition and the rewards are just ornamental to the charitable journey undertaken, but the internal satisfaction one derives is beyond words to express.

This reminds me of a phrase. 'Charity means, lending bone to a dog, when you are as hungry as the dog.'

So, let's start selfless service voluntarily instead of waiting for the right time, place, occasion or some extrinsic push to move forward. Above all, the sense of charity should begin from within.

So, let's start and most importantly, let's not stop ever from placing 'WE' before 'I'

P. Satya Bharathi, Bhubaneswar

ऐ दोस्त, कहाँ हो तुम !

सुबह होते ही कुत्ते के दो बच्चे मचाते थे शोर,
बुलाते अपनी माँ को कि खाना दो हो गई भोर।

मेरे दुख में सदा उन्होंने मेरा मन लुभाया,
पर एक दिन उनपर मुझे बड़ा तरस आया।

उनकी माँ को पकड़ कर ले गए चंद लोग,
पर जान न पाए वे उन मासूम बच्चों का शोक।

उन्हें भूखे-प्यासे देख मेरी माँ को उनपर आई दया,
अत: उसने उन्हें कटोरी में रखकर दूध पिलाया।

मैं खूब खेलती उनसे पर भगवान को था कुछ और ही मंजूर,
एक तेज गाड़ी के चक्कों ने उन्हें भी मुझसे कर दिया दूर!!

आज गुस्सा हूँ मैं उस भगवान से जिसने हम मनुष्यों को बनाया,
जिन्होंने अपनी बुद्धि के नशे में सबकुछ भुलाया।

जीव-जंतुओं से उनकी धरती छीन उन्हें किया बेघर,
खुद अपने पैर पे कुल्हाड़ी मारी है, इस बात से है बेखबर।

अभी भी देर नहीं हुई, सँभल जा मनुष्य समय रहते,
क्योंकि सुबह का भूला शाम देर से घर लौटे तो उसे
भूला नहीं कहते!!

सुमेधा सिंह, भुवनेश्वर

ज्योत से ज्योत जलाते चलो

बात उस बच्चे की है जो तीन साल का था जब उसके पिताजी गुजर गए थे। बड़ी मुश्किल से उसकी माँ ने उसे पाल-पोस कर बड़ा किया था। जब वह 10 साल का हुआ तो घर-घर में अखबार बेचने जाता था। दिसंबर का वो एक कँपा देने वाला दिन था। उसे बहुत मन था कि वो स्कूल जाकर पढ़ाई करे, पर फीस के पैसे नहीं थे। उसने माँ की आज्ञा से होटल में जाकर भी साफ-सफाई का काम करना शुरू किया। नए साल के आने की खुशी में होटल में खूब भीड़ हुई और उसे बख्शीश में 500 रुपये मिले। वह और उसकी माँ बहुत खुश थे। साल की शुरुआत में ही उसकी माँ ने स्कूल में जाकर उसका नाम लिखवा दिया। वह बहुत दिल लगाकर पढ़ाई करता। साथ ही मेहनत के साथ अपना काम करता। इस तरह एक दिन वह बड़ा हो गया। वह बैंक में नौकरी करना चाहता था पर कोचिंग की फीस भरने के लिए पैसे अब भी नही थे क्योंकि माँ-बेटे दोनों मिलकर बस गुजर करने लायक ही काम पाते थे। बेटा बहुत दुखी हुआ और अपने दुखों की भगवान से फरियाद करने मंदिर पहुँचा। वहाँ गिड़गिड़ाकर जब वो बाहर पहुँचा तो एक गरीब आदमी वहाँ बैठा था। उसका दुख सुनकर उसने कोचिंग में एडमिशन के लिए अपने पास रखे सारे पैसे उसे दे दिए और कहा कि वो मंदिर के परिसर में ही रहता है अत: जब चाहे उसे पैसे लौटा सकता है। लड़का खुशी-खुशी कोचिंग सेंटर गया और एडमिशन लेकर खुशी की खबर देने सीधा उस गरीब के पास पहुँचा। पर ये क्या! वो आदमी तो मर चुका था। सबने बताया कि वो बहुत बीमार था मगर उस लड़के की भगवान से दुहाई सुनकर अपनी दवा के सारे पैसे उसे दे दिए क्योंकि वो तो बूढ़ा हो ही चुका था अत: उसके जीने से अधिक उस लड़के का जीना अधिक महत्वपूर्ण था। लोगों से ये बात सुनकर लड़का भाव-विभोर हो गया। उसने आज मानवता का नया पाठ पढ़ा था।

साल भर बाद एक अच्छे बैंक में उसकी नौकरी लग गई और उनके दिन फिर गए। नौकरी के पहले ही दिन जब वो बैंक के पास के होटल में चाय पीने गया तो वहाँ काम करता हुआ एक बच्चा दिखा। उसने फौरन उसे बुलाया और उसके घर जाकर उसकी समस्या सुनी।

उस दिन उसने प्रण किया कि आज के बाद उसे नजर आने वाले ऐसे हर दुखी बच्चे की वह मदद करेगा और भगवान से दुहाई करने वालों की मन्नतें पूरी करेगा। किसी ने सच ही कहा है कि एक ज्योत से एक नहीं अनेक दीये जल सकते हैं!!

स्वाति बेहेरा, भुवनेश्वर

आरजू

कर रहे हैं पुष्प अर्पण, आज जिन की याद में,
अब वे नहीं हैं, पर वही हैं आज वर्षों बाद में।

सोच तू ऐ तिफ़्ल-ए-हिंद, क्यों वे आए याद में।
क्या नहीं आ सकती ? तेरी तस्वीर भी इस बाग में।

कैसे बंधन में बँधा है ? किसने तुझको रोका है ?
तेरे दिल ने बाँध तुझको रास्ते में रोका है।

तोड़ दे तू सारा बंधन, हौसला अब कर बुलंद।
छोड़ दे यह ऐश-ओ-इशरत। बाँध ले तू अब कफन।

(क्योंकि) दिल है मोम और दिल है शीशा, दिल ही तो फौलाद है।
जिसने पाया दिल पर काबू, वह अमर इंसान है।

दिल संभलते ही तुझे, सोज़-ए-वतन आ जाएगा।
तू भी बन के वीर वतन का, हक अदा कर पाएगा।

बागबानी कर रहा 'इद्रिस', एक सिमटे बाग में।
आरजू फूले-फले, फ़ौलाद दिल इस बाग में।

मोहम्मद इद्रिस
केंद्रीय विद्यालय -3, मंचेश्वर, भुवनेश्वर

ମନର କଥା

ମନର ଭାବନା କେବେ ମରିପାରେ ନାହିଁ
ହୃଦୟର ତଳୁ ଦିକ୍ ଦିକ୍ ଉଠେ ଜଳି।
ଲୁହ ପୋଛିବାକୁ ଦୁଃଖୀର ଆଖିରୁ
ହାତ କାହିଁ କେବେ ଉଠି ତ ପାରେ ନାହିଁ।
ନିଶୂନ ରାତିରେ ଥରେ ତ ପଚାର ବନ୍ଧୁ
ମନକୁ ନିଜର ଅତି ଆପଣାର କରି

ଜନ୍ମ ଆମର କ'ଣ ବ୍ୟର୍ଥରେ ଯିବ ଚାଲି ?
ପରଦୁଃଖେ ଯଦି ଦୁଃଖୀ ନ ହେଲେ ଆମେ,
ହୃଦୟ ଦରଜା ଖୋଲି ନ ପାରିଲେ ଯଦି,
ମନର ଭାବକୁ ବଦଳାଇ ଥରେ ଦେଖ,
ଗୋଟିଏ ହୃଦୟେ କୋଟିଙ୍କୁ ନିଜର କରି
ଧରା ବକ୍ଷରେ ସମତାର ବାଣୀ ବିଞ୍ଚି

କର୍ମମୟ ଏଇ ଜୀବନ ହୋଇବ ଧନ୍ୟ
ଦେଇ ଦେଇ ଖାଲି ନିସ୍ୱ ହୋଇଯାଅ
ତେବେ ସିନା ବନ୍ଧୁ ତୃପ୍ତ ହୋଇବ ଆତ୍ମା
ପରମ ପଦରେ ମିଳିବ ଟିକିଏ ଆଶ୍ରୟ

ସୀମା ମିଶ୍ର
ଦାମନଯୋଡ଼ି

Sharing is Caring

Once I read a quote "Sharing is Caring. It reduces the burden and doubles the happiness". I realized the meaning of this quote through an incident.

I was standing in front of a milk shop outside the temple to buy milk, when a group of five beggars caught my attention. They were very naughty kids and were following people in the hope of money or eatables. After every chase, whether successful or unsuccessful, they would return again to the shop. They were telling people that they were hungry which I assumed to be true as they were saying the same to each other. One of the customers of the milk shop gave a small container of curd to the youngest of them. Rest of them looked at the container with a clear temptation in their eyes. They all wanted it. The kid having it seemed to realize this. I was curious about his next move. Other kids were staring at him too with pleading eyes. Will he eat it all alone or he would share this?

Then, in spite of being the youngest of them, he made a move which many matured and adult people do not make. He started giving spoonful of curd to them one by one. The tallest of them, whom I assumed to be the eldest, was cleaning their mouths with his shirt. He was taking care of all of them. Soon the curd finished. All of them had equal number of spoons except one. That kid started crying. All others apologized to him and assured him that he would get the maximum share if they get something else to eat. He seemed to be pleased by it but said that he would have equal share only and was not angry with them. They all smiled and ruffled his hair with affection and then resumed their begging routine.

On my way home, I was lost in thoughts to analyze what I had just witnessed. The kids just showed me what "sharing and caring" means. They all were hungry. The kid who was offered the curd, could eat it all alone. But he chose to share. The kid who got the least to eat denied to eat more than the rest next time. I don't know whether they were brothers, cousins or they simply knew each other because of begging together daily but their love and care for each other was more than many who share the same blood.

As an individual, it's much easier to share material things rather than the intangible things like the values we hold close to ourselves. This is why sharing should always be equated with caring. It is not a passive activity. It takes strength for most of us to share things that are dear to us. Through this we also learn how to be more efficient members of a community. Sharing is not simply giving away the things that we don't need, rather it's a way of sharing things with people who are in need of them because we understand them.

Sadly, we have lost the art of sharing and caring in this competitive world. It's time that we revive it. Sharing doesn't have to be a grand gesture to be appreciated. It can be as simple as sharing something you feel with someone, like a compliment, "You look so pretty today". Those simple words can often make someone feel special and cared for, and in return, make the one who said them happy. One of the best things you can share with others is your own happiness. Tell them what made you happy and why, your story just might inspire a change in them. Sharing is truly a win-win!

Lina Mohapatra, Bhubaneswar

ऐ वृक्ष कहो तुम मौन हो क्यों ??

ये धूप तपा कर जाती है
और लू के थपेड़े खाते हो,
वो ठंडी-ठंडी तेज हवा
जो बर्फीली है सूखी,
वो तूफानों की संगिनी,
जब चमके बिजली रात ढले,
जब जगमग हो उठे आकाश,
भयभीत नहीं तुम होते हो,

जब मेघ गरज कर बरस पड़े,
जब नदी-नाले बह निकले,
और मिट्टी कट कर धँस जाए,
तुम दृढ़ चित्त तुम वीर-सृजन
तुम अड़े खड़े ही रहते हो,
ऐ वृक्ष कहो क्यों मौन हो तुम ??
न तो अभियोग किया तुमने,
न कोई साया ढूँढा है,

बस धीरज धर कठिनाई में
बस मन को साधे रखा है।
हे वृक्ष सुनो तुम जीवित हो
तो जीवित है ये गाँव नगर,
तुम नहीं रहे तो बन जायेगा
ये जन-जीवन एक नरक !!

साइम् हबीब
दामनजोड़ी

ଏଇତ ସଂସାର.... ତେଲ ଆଉ ଲୁଣର

ସ୍ନେହ, ପ୍ରେମ, ଶ୍ରଦ୍ଧାରେ ଗଢ଼ା...
'ମାନବିକତା'... ମାନବର...
ନିଃସ୍ୱାର୍ଥ ସେବାରେ ତା'ର...
କରିଦିଏ ସମୃଦ୍ଧ ତଥା ସୁଦୃଢ଼
ସମ୍ପର୍କର ବାତାବରଣ
ସେ ଘରର ଚାରିକାନ୍ଥ ଭିତରେ ହେଉ...
ଅବା ଗାଁ-ଗଣ୍ଡା ସହରର... ।

ଅଙ୍ଗେ ନିଭାଇଥିଲି ସେଦିନ
ବିତାଇ କିଛି ମୁହୂର୍ତ୍ତ
ସେଇ ସ୍ନେହ ରଙ୍କୁଣା ଶିଶୁଙ୍କ ମେଳରେ
ବାଣ୍ଟିବାକୁ ଯାଇଥିଲି... କାଣିଚାଏ,
ସ୍ନେହରୁ ଟୋପେ...
ମା ଶବ୍ଦ ଜାଣିବା ପୂର୍ବରୁ... ଛେଉଣ୍ଡ ଯେ ସେମାନେ...
ମୁହୂର୍ତ୍ତକର ମାତୃତ୍ୱ-ସମ ଶରଣରେ ମୋର...
କରିନେଲେ ମୋତେ ତାଙ୍କ ନିଜର....
ଢାଳିଦେଲେ... ମୋ ଝୋଲିରେ...
ଅମାପ... ସେଇ ନିଷ୍ପାପ ଦରଦୀ ହସର ସ୍ରୋତ...
କୁସୁମିତ ହୋଇଗଲା... ଅନ୍ତର ମୋର...
ଅବ୍ୟକ୍ତ ସେ... ଅନୁଭୂତି...
ଦ୍ରବୀଭୂତ କରିଦେଲା... ସମଗ୍ର ସତ୍ତାକୁ ମୋର...

ଜାଣେ ନାହିଁ ଖୁସିର ଫୁଆରା...
ହସର ଲହରୀରେ...
ଶୋଇଥିଲା... କେତେ ଯେ ସମୟ...
ଦିବ୍ୟାଙ୍ଗ ବାଳକ ବାଳିକାଙ୍କ
କଳା ଓ କଳାକାରୀରେ...
ବ୍ୟକ୍ତ କରୁଥିଲେ ସେମାନଙ୍କର
ଅନ୍ତରର କଥା... ସ୍ୱତନ୍ତ୍ର ଭାଷାରେ...
ମୁଁ କିନ୍ତୁ ପାଉ ନ ଥିଲି ଭାଷା...
କରିବାକୁ ବ୍ୟକ୍ତ ମୋ ଅନୁଭୂତି...
ସେଇ ଅନ୍ତରଙ୍ଗ ମୁହୂର୍ତ୍ତମାନଙ୍କର...

ପୁଣି ଧାରେ ହସ.. ଦି'ଧାର ଖୁସୀର ଲୁହ...
ଯେବେ ବୋହି ଆସେ...
ଅଲୋଡ଼ା ପ୍ରାୟ ହୋଇଯାଇଥିବା...
ଅସଂଖ୍ୟ ପ୍ରୌଢ଼ଙ୍କ ଆଖିର...
କେବଳ ସକ୍ଷମଙ୍କ କିଛି ସମୟ ଆଉ...
ବଳକା ପୁଞ୍ଜିର ଖର୍ଚ୍ଚରୁ.... ।
ସେ ସବୁର ମୁଁ ପ୍ରତ୍ୟକ୍ଷଦର୍ଶୀ...
ଜାଣେ ନାହିଁ ସେଇ ସୁଖ କେତେ ସମୟର
ସେଇ ଅସ୍ତିତ୍ୱ ହଜାଇ ଥିବା ପ୍ରୌଢ଼ ପ୍ରୌଢ଼ାଙ୍କର...
ତେବେ ସଞ୍ଚରି ଯାଇଥିଲା ମୋ ଭିତରକୁ...
ତା'ଙ୍କ ନିରୁତା ସ୍ନେହର ବାର୍ତ୍ତା...
ସେଇ କାହାକୁ ଖୋଜୁଥିବା ଲୁହରେ...
ଏବଂ ଶୁଷ୍କ ଓଠରେ ଲାଗି ରହିଥିବା...
ଧାରେ... ହସରେ... ।
ସେହି କମ୍ବଳ ଢଙ୍କାରେ ଜଦି
କେଇଜଣ ପାଇଯାଆନ୍ତେ ଉଷ୍ମତା...
ଥର ଥର ହାଡ଼ଭଙ୍ଗା ଶୀତର ଲହରୀରେ...
ବିତଉଥିବା ରାତି... ସଡ଼କ କଡ଼ରେ...
ଲୋଡ଼ା ପ୍ରାୟ ହେଉ ନ ଥିବା ବସ୍ତ୍ର ଯଦି...
କରିଦିଏ ନିବାରଣ କାହାରି ଲଜ୍ଜାକୁ....
ଅଧିକା ହେଇଯାଉଥିବା ଖାଦ୍ୟ ମେଣ୍ଟାଇ ଦିଏ...
କାହାରି ଭୋକକୁ... ।
ପାରିଲେ ଯଦି ସମୟ ଦେଇ..
କାହା ସୁଖ ଅବା ଦୁଃଖରେ ହେବା ପାଇଁ ଭାଗୀ...
ବଦଳେ ତା' ପାଇଥିବା ଅନାୟାସେ ଖୁସି...
ଏଇତ ଜୀବନ... ସୁଖ ଆଉ ଦୁଃଖର...
ଏଇତ ସଂସାର ତେଲ ଆଉ ଲୁଣର... ।
ଅତିକ୍ରମ କରିଯିବା ଜୀବନର ମାଇଲ ଖୁଣ୍ଟ...
ପାଥେୟ କରି... ସେଇ
'ଭାବ' ଦିଆନିଆ ରୀତିକୁ....
ଅଜାଣତେ ପାଇଥିବା ସୁଖ...
କରିଦେଇ ଯତ୍ନ ସେଇ ମାନବର ସେଇ ସମାଜର...
ଦେଇଯିବା ପରିଚୟ...
"ଶ୍ରେଷ୍ଠ ମାନବିକତା"ର ॥

ଗାୟତ୍ରୀ ପାଣିଗ୍ରାହୀ
ଦାମନଯୋଡ଼ି

ମହକିତ ମୁହୂର୍ତ୍ତ

ଘରର ଅନ୍ୟ ସଦସ୍ୟମାନଙ୍କଠାରୁ ଲୋରା ଥିଲା ଟିକେ ଭିନ୍ନ। ବେଶୀ ସାଙ୍ଗ-ସାଥୀ, ଥଟାତାମସା, କୋଳାହଳ କି ଗପସପ ତାକୁ ଆଦୌ ଭଲ ଲାଗେନା। ତା'ମାନେ ନୁହେଁ ଯେ ତାକୁ ଅନ୍‌ସୋସିଆଲ କୁହାଯିବ। ଯେତିକି ଦରକାର ସେତିକି, ବେଶୀ ନୁହେଁ କି କମ୍ ନୁହେଁ। ଖୁବ୍ ମପାଚୁପା ତା ଚରିତ୍ର। କିନ୍ତୁ ସାନଭଉଣୀ ଲୋଲି ଠିକ୍ ତା'ର ବିପରୀତ। ସବୁବେଳେ ବଜର ବଜର ହେଉଥିବ। କ୍ଷଣିକରେ ପିଲାଠାରୁ ବୁଢ଼ାଯାଏଁ ସମସ୍ତଙ୍କ ସାଙ୍ଗରେ ଦୋସ୍ତି ବନେଇଦେବ ଅନାୟାସରେ। ତା' ସାଙ୍ଗରେ ତୁଳନା କରି ସମସ୍ତେ କୁହନ୍ତି ଲୋରା ଟିକେ ରିଜର୍ଭ।

ଭାଗ୍ୟକୁ ବି ଦେଖ। ଦୁଇ ଭଉଣୀଙ୍କର ବିବାହ ହେଲା ନିଜ ନିଜ ସ୍ୱଭାବର ପ୍ରତିକୂଳ ପରିବାରରେ। ଲୋଲିର ସ୍ୱାମୀ ଆମେରିକାରେ ଚାଟାର୍ଡ଼ ଏକାଉଣ୍ଟାଣ୍ଟ ଥିଲାବେଳେ ଲୋରାର ଶାଶୁଘର ସହରତଳି ଅଞ୍ଚଳରେ। ସ୍ୱାମୀ ଓଡ଼ିଶା ସରକାରଙ୍କ ପଦସ୍ଥ କର୍ମଚାରୀ। ଅବଶ୍ୟ ଶାଶୁଘର ବେଶ୍ ସମ୍ଭ୍ରାନ୍ତ। ସ୍ୱାମୀ ଲଲନ୍ ହେରିକା ହେଉଛନ୍ତି ପାଞ୍ଚ ଭାଇ ଭଉଣୀ। ଲଲନ୍ ତୃତୀୟ। ତଳଭାଇ ବମ୍ବେରେ ମେଡିକାଲ ପଢୁଛନ୍ତି। ଏକମାତ୍ର ନଣନ୍ଦ ବାହା ହୋଇ କଲିକତାରେ। ସବା ବଡ଼ଭାଇ ପାଖ କଲେଜରେ ଇକୋନୋମିକ୍ସ୍ ପ୍ରଫେସର ଥିଲାବେଳେ ଦ୍ୱିତୀୟ ଭାଇ ରୁରାଲ୍ ବ୍ୟାଙ୍କ ମ୍ୟାନେଜର। ଅତଏବ ଦୁଇଯାଆ ଦୁଇ ଭଉଣୀ ପରି ଗାଁରେ ରୁହନ୍ତି ଶାଶୁଘରେ। ଲଲ୍‌ନଙ୍କ ଚାକିରୀ ଟିକେ ଦୂରରେ ଥିବାରୁ ତାକୁ ଅବଶ୍ୟ ଗାଁରେ କେବେ ବେଶୀଦିନ ରହିବାକୁ ପଡ଼ିନି। ମାତ୍ର ଲଲନ୍‌ଙ୍କର ଅତ୍ୟଧିକ ଘରପ୍ରୀତି ଯୋଗୁଁ ତାକୁ ବର୍ଷକୁ ପ୍ରାୟ ତିନି ଚାରି ଥର ଶାଶୁଘର ଆସିବାକୁ ପଡ଼ିଥାଏ। ପ୍ରତି ପୂଜାପାର୍ବଣ କିମ୍ବା ଭଲମନ୍ଦ ଦିନରେ ଲଲନ୍‌ଙ୍କର ସେଇ ଗୋଟିଏ ପ୍ଲାନ୍-ଚାଲ ଗାଁକୁ ଯିବା। ସମସ୍ତଙ୍କ ସାଙ୍ଗରେ ଛୁଟି କଟେଇବା। ଲୋରାକୁ ଏସବୁ ଭଲଲାଗେନି। ସବୁ ବେଳେ ଲଗେଜ୍ ପ୍ୟାକିଂ କର ଆଉ ଶାଶୁ ଘରକୁ ଚାଲ। ଦୁନିଆରେ କ'ଣ ଆଉ ଜାଗା ନାହିଁ ବୁଲିଯିବାକୁ। ଲିଜୁ ଜନ୍ମ ହେଲାପରେ, ତାକୁ ନେଇ ଗାଁକୁ ଯିବା ଲୋରାକୁ ଖୁବ୍ କଷ୍ଟଲାଗେ। ତଥାପି ଲଲନ୍‌ଙ୍କ ଇଚ୍ଛାକୁ ଭାଙ୍ଗିପାରେନି ସେ। ଭିତରେ କାନ୍ଦୁଣୁ ମାନ୍ଦୁଣୁ ହୁଏ ସିନା ଉପରକୁ କିଛି ପ୍ରକାଶ ନ କରି ସୁନା ବୋହୂପରି ଶାଶୁ ଘରକୁ ଯାଏ।

ହେଲେ ଏ ବର୍ଷ ଟିକେ ଆଗୁଆ, ସେ ଅଲଗା ପ୍ଲାନ୍‌ଟିଏ କରିଛି। ଖୁବ୍ ପଟେଇ ପାଟେଇ ଲଲନ୍‌ଙ୍କୁ ତାଙ୍କ ପଞ୍ଚମ ବିବାହ ବାର୍ଷିକୀ ପାଇଁ କେରଳ ଯିବାକୁ ରାଜି କରାଇଛି। ନେଟ୍‌ରୁ କାଢ଼ି କେତେଗୁଡ଼ିଏ ଭଲ ରିସୋର୍ଟର ନାଁ ଲିଷ୍ଟ କରିଛି। ପିଓର୍ ଭେଜ୍ ରେଷ୍ଟୁରାଣ୍ଟ। ନ ହେଲେ କେରଳରେ ପ୍ରାୟ ସବୁ ହୋଟେଲ୍‌ରେ ବିଫ୍, କେବେ ବାହାରିବେ, କେଉଁଦିନ କ'ଣ ଦେଖିବେ ପୁଣି କେବେ ରିଟର୍ଣ୍ଣ କରିବେ ତା'ର ମଧ୍ୟ ଏକ ସୁବିସ୍ତୃତ ନୋଟ୍ ପ୍ରସ୍ତୁତ କରିଛି। ସବୁ ପ୍ଲାନ୍ କରିସାରି ଟିକେଟ୍ ବୁକ୍ କରିବାକୁ ଯିବା ପୂର୍ବରୁ ଶାଶୁଙ୍କର ଫୋନ୍ ଆସିଲା- "ଲଲନ୍ ତୁ ଘରକୁ ଆସିବୁ। ତୋ ବିବାହ ବାର୍ଷିକୀ ଦିନ ସତ୍ୟନାରାୟଣ ପୂଜା କରିବି। ତତେ ଟାଏଫଡ୍ ହେଲାବେଳେ ମାନସିକ କରିଥିଲି।" ଯାଃ! ସବୁ ଭଣ୍ଡୁର ହୋଇଗଲା। କେରଳ ଯିବା ପୋଷ୍ଟପୋନ୍‌ଡ୍। ବିଚରା ଲୋରାକୁ ପୁଣି ଶାଶୁ ଘରକୁ ଯିବାପାଇଁ ପ୍ୟାକିଂ କରିବାକୁ ପଡ଼ିଲା।

ଏମିତିରେ ସେ ଟିକେ ଗାଁ ଚଳଣିକୁ ଆପଣେଇ ନେଇ ପାରେନି। ଏତେ ଲୋକଙ୍କ ଭିତରେ ଆଦୌ କମ୍‌ଫର୍ଟ ହୋଇପାରେନି ସେ ଶାଶୁଘରେ। ଛୋଟ ପରିବାରରେ ବଢ଼ିଛି। ଠିକ୍ ବିଜ୍ଞାପନ ପରି ଆମେ ଦୁଇ ଓ ଆମର ଦୁଇ। ତା ସ୍ୱଭାବ ଜାଣି ଘରେ ମଧ୍ୟ ତାକୁ କେହି ଡିଷ୍ଟର୍ବ କରନ୍ତି ନାହିଁ। ତା ରୁମ୍ ଭଲ ତ ସେ ଭଲ। ଏଣୁ ଶାଶୁଘରେ ଲୋରାକୁ ଅଣନିଶ୍ୱାସୀ ଲାଗେ। ସକାଳ ସାଢ଼େ ପାଞ୍ଚରୁ ରାତି ସାଢ଼େ ଦଶ ଯାଏଁ ତାକୁ କେତେବେଳେ ବି ଟିକେ ନିରୋଳା ସମୟ ମିଳେନା। ଏମିତି ନୁହେଁ ଯେ ସେ ସବୁବେଳେ କାମ କରୁଥାଏ। ମାତ୍ର ସବୁବେଳେ କେହି ନା କେହି ତା ପାଖରେ ଲାଖିକରି ଥିବେ। ଦ୍ୱିପ୍ରହରେ ଖାଇ ଟିକେ ଗଡ଼ିପଡ଼ିଥିବ କି ନାହିଁ ଯା ଆସି ଡାକିବେ – ଆ ଶାଶୁଙ୍କ ସାଙ୍ଗରେ ମିଶି ତାସ୍ ଖେଳିବା। କେବେ କେବେ ଲିପୁ ଓ ସୋନି (ପୁତୁରା, ଝିଆରୀ) ସେମାନଙ୍କ ବରାଦ୍ ନେଇ ଆସି ତା ପାଖରେ ହାଜର ହୋଇଯାଆନ୍ତି। ସୋନି କୁହନ୍ତି- 'ପ୍ଲିଜ୍ ମୋ ଚୁଟିରେ ଟିକେ ଫିସ୍‌ଟେଲ୍ କରିଦିଅ ନା ଖୁଡ଼ୀ।' ଲିପୁ କହିବେ ଖୁଡ଼ୀ ମୋ ପ୍ରୋଜେକ୍ଟ ପାଇଁ ଟିକେ ହେଲ୍‌ପ୍ କର। ସେ ପିଲାମାନଙ୍କୁ ଭଲପାଏ। ମନା କରିପାରେନି। କାହା କଥା ଟାଳି ପାରେନି, ଏଣୁ ଖରାବେଳେ ବସି ତାସ୍‌ଖେଳେ। ନିଜକୁ ଇଞ୍ଚ ଇଞ୍ଚ କରି ବାଣ୍ଟୁଥାଏ ସେ ଶାଶୁଘରେ। ମା'ର ଶିକ୍ଷା ଶାଶୁ ଘରେ ମିଳିମିଶି ଚଳିବୁ। ଏକ ଶିଙ୍ଘିଆ ହେବୁନି। ଅନ୍ୟପାଇଁ କିଛି କରିବାରେ ଯେଉଁ ନୈସର୍ଗିକ ଆନନ୍ଦ ମିଳେ, ତାହା କୋଟି ଐଶ୍ୱର୍ଯ୍ୟଠାରୁ ଆହୁରି ଅଧିକ। ଏଣୁ ସେ ଭଲ ବୋହୂ ହେବାକୁ ଚେଷ୍ଟାକରେ।

ଶାଶୁଘରେ ସବୁବେଳେ ସେଇ ଗୋଟିଏ ପ୍ରକାର ରୁଟିନ୍। ଜଳଖିଆ ଖାଇଦେଇ ଦୁଇ ଦେଢ଼ଶୁର ନିଜ ନିଜର କର୍ମକ୍ଷେତ୍ରକୁ ପଳାନ୍ତି। ଶ୍ୱଶୁରଙ୍କର ନିତିଦିନର ଜଳଖିଆ ହେଉଛି ଚୁଡ଼ା କଦଳୀ। ନ ହେଲେ ଚୁଡ଼ା ଦହି। ସେମାନେ ଚାଲିଗଲାପରେ ଦିନ ଦଶଟା ବେଳକୁ ପଖାଳ ଧରି ବସିପଡ଼ନ୍ତି ଦୁଇ ଯାଆ। କେବେ ଟିକେ ଭଜା ହେଲେ ତ ଭଲ, ନ ହେଲେ ଆଳୁ ସିଝାଟିଏ, ପୋଟଳ, ଜହ୍ନି, ଭେଣ୍ଡି କି ଟମାଟୋ ପୋଡ଼ି ସେଥିରେ ସୋରିଷ ତେଲ, ଲଙ୍କା, ରସୁଣ ଦଳି ଖାଇବାକୁ ବସିପଡ଼ନ୍ତି ଏକାଠି। ସେ ଜଳଖିଆ ଖାଇ ଥିଲେ ବି ତାକୁ ଆଦରରେ ଡାକନ୍ତି ଆ ଖାଇବୁ। ଚକଟା ବାସ୍ନାରେ ଘର ମହକିଯାଏ, ପାଟି ଲାଳେଇଯାଏ, ମାତ୍ର ଦିନ ଦଶଟାରେ ଏତେ ହେଭି ଖାଦ୍ୟ ଖାଇବାଟା, ଲୋରାକୁ ଗୋଟେ

କେମିତି କେମିତି ଲାଗେ। ଗୋଟିଏ ଗିନାରୁ ସେଆର କରି ଖାଇବା ତା ଜାତକରେ ନାହିଁ। ତଥାପି ଯା'ମାନଙ୍କର ମନ ରକ୍ଷାକରି ଟିକେ ଚାଖିଦେଇ ଟାକରା ଫୁଟାଏ। ଅବଶ୍ୟ ସେହି ମିଶାମିଶି ଚକଟାର ସ୍ୱାଦ ଥାଏ ଅପୂର୍ବ। ଏଇମିତି ଅନେକ କଥା ସେ କରେ, ନିଜ ରୁଚି ବିରୁଦ୍ଧରେ, ନିଜ ଇଚ୍ଛା ବିରୁଦ୍ଧରେ। ଆସିବା ଦିନଠୁ, ଦିନ ଗଣୁଥାଏ ଫେରିଯିବାକୁ।

ଏଥରକ ତ ଶାଶୁ କହିଛନ୍ତି ମିନିମମ୍ ଗୋଟିଏ ସପ୍ତାହ ତାକୁ ଗାଁରେ ରହିବାକୁ ହେବ। ବିବାହ ବାର୍ଷିକୀ ପାଇଁ କୁଣିଆ ମଇତ୍ର ଆସିବେ। କାମ ଟିକେ ଅଧିକ। ଏଣୁ ଶାଶୁଙ୍କର କଥାମାନି ଲଲନ୍ ତାକୁ ସାତ ଦିନ ଆଗରୁ ଗାଡ଼ିକରି ପଠାଇ ଦେଲେ। ଅଫିସ୍‌ରେ ବହୁତ କାମ। ମନ୍ତ୍ରୀଙ୍କର ଭିଜିଟ୍ ଅଛି। ଏଣୁ ସେ ଗୋଟିଏ ଦିନ ଆଗରୁ ଆସି ପହଞ୍ଚିବେ। ଲୋରା ଶାଶୁଘରେ ପହଞ୍ଚୁ ପହଞ୍ଚୁ ପ୍ରାୟ ଦିନ ଗୋଟେ। ସମସ୍ତେ ଯେମିତି ତାକୁ ଚାତକପରି ଚାହିଁ ବସିଥିଲେ। ଗାଡ଼ି ଅଟକୁ ଅଟକୁ ସମସ୍ତେ ବେଢ଼ିଗଲେ ତାକୁ। ଏଥରକର ମୁଖ୍ୟ ଆକର୍ଷଣ ହେଉଛି ତା ପୁଅ ଲିଜୁ। ଦୁଇ ଦେଢ଼ଶୁର ଲିଜୁକୁ ନେବାପାଇଁ ହାତ ବଢ଼େଇଲା ବେଳକୁ ଶ୍ୱଶୁର ଶୂନ୍ୟେ ଶୂନ୍ୟେ ତାକୁ ଟେକିନେଲେ ନିଜ କୋଳକୁ। ହସର ଲହରୀଟିଏ ଖେଳିଗଲା ସମସ୍ତଙ୍କ ଭିତରେ। ଘରେ ପଶିଲେ ସମସ୍ତେ। ମକରା ଲଗେଜ୍ ସବୁ ଘରକୁ ବୋହି ଆଣିଲା। ଯାଆ ଖଣ୍ଡେ ଶାଢ଼ି ବଢ଼େଇ ଦେଇ ଯା ତୁ ଫ୍ରେଶ୍ ହେଇ ଆସିବୁ କହିଲା ବେଳକୁ ଶାଶୁ ଖଣ୍ଡେ ନୂଆ ନାଲି ଶାଢ଼ି ତା ହାତରେ ଗେଞ୍ଜି ଦେଇ କହିଲେ- "ମା, ତୁ ତ ଜାଣୁ, ମୁଁ ଜମା ନୂଆଶାଢ଼ି ପିନ୍ଧିପାରେନି। ଖଡ଼ଖଡ଼ ହୁଏ। ତୁ ଟିକେ ପିନ୍ଧି ସଡ଼ କରିଦେଲାପରେ ମୁଁ ପିନ୍ଧିବି।" ଲୋରା ଜାଣେ ଶାଶୁଙ୍କର ଏଇଟା ଗୋଟେ ବାହାନା। ପ୍ରତିଥର ଏମିତି କହିକି ତାକୁ ଖଣ୍ଡିଏ ନୂଆ ଶାଢ଼ି ଦିଅନ୍ତି। ଆଉ ଶେଷରେ କହିବେ ତତେ ଏ ଶାଢ଼ିଟି ଖୁବ୍ ମାନୁଛି, ରଖିଥା ପିନ୍ଧିବୁ। ଦୁଇ ଯାଆ ମିଛି ମିଛିକା ଅଭିମାନରେ ଶାଶୁଙ୍କୁ ଚାହିଁ କୁହନ୍ତି- "ବାଃ ବୋଉ ! ଆମେ କ'ଣ ନ ଥିଲୁ କି ତୁମ ଶାଢ଼ି ସଡ଼ କରିବାକୁ।" ଶାଶୁ ନିରୁତା ହସଧାରେ ମୁହଁରେ ଖେଳାଇ ସେ ସ୍ଥାନ ଛାଡ଼ି ଚାଲିଯାଆନ୍ତି।

ଲୋରା ଫ୍ରେଶ୍ ହୋଇ ଆସିଲା। ଯାଆମାନେ ଏହା ଭିତରେ ଲିଜୁର ସିଝା ତରକାରୀ ଓ ଖେଚେଡ଼ି ବନେଇ ସାରିଥିଲେ। ତାକୁ ଖୁଆଇ ସାରିଲା ପରେ ସମସ୍ତେ ଏକାଠି ଖାଇଲେ। ଗପ ଯେମିତି ସରୁ ନ ଥିଲା। ସବୁଦିନେ ଫୋନ୍‌ରେ ଗପୁଥିଲେ ମଧ୍ୟ ଏତେ କଥା କେଉଁଠୁ ଆସୁଥିଲା କେଜାଣି ? ମଝିରେ ମଝିରେ ଆସି ଶାଶୁ କ'ଣ ଟିକେ ଟିକେ କହି ଦେଇ ଚାଲି ଯାଉଥିଲେ। ଏଇ ଯେମିତି, ଏଥରକ ପୂଜା କୁଳପୁରୋହିତ କରିବେ। ପୁଣି ଘେରେ ବୁଲି ଆସି କହୁଥିଲେ ନୂଆ ମାଟି ହାଣ୍ଡି ଆଣି ସିନ୍ଦୂର ଦେଇ ରଖିବ। ସେଇଥିରେ ଶିରିଣି ଚକଟା ହେବ।

ଏହିପରି ହର୍ଷୋଲ୍ଲାସ ମଧ୍ୟରେ ତିନୋଟି ଦିନ କଟିଗଲାଣି। ସେଦିନ ଲୋରା ଗାଧୋଇ ସାରି ଲୁଗା ଶୁଖାଉଥିଲା ତାରରେ। ହଠାତ୍ ଶ୍ୱଶୁର ଅସ୍ତବ୍ୟସ୍ତ ହୋଇ ପଶିଆସି ଲୋରାକୁ ଚାହିଁ କହିଲେ- ବୋହୂ ମା ! ମୋ ସାଥୀରେ ସଙ୍ଗେ ସଙ୍ଗେ ଚାଲ। ସମୁଦିଙ୍କ ଆକ୍ସିଡେଣ୍ଟ ହୋଇଛି। ଲୋକମାନେ ନେଇ ସେମାନଙ୍କୁ ହସ୍‌ପିଟାଲରେ ଆଡ଼ମିଟ୍ କରେଇଛନ୍ତି। ମଥା ଉପରେ ଆକାଶ ଛିଡ଼ିପଡ଼ିଲା କି ଆଉ ! ଲୋରା ସେଇଠି ବସିପଡ଼ିଲା ଲଥ୍‌କରି। ଚାରିଆଡୁ ସମସ୍ତେ ଧାଇଁ ଆସିଲେ ତା ପାଖକୁ। ତା କାନ୍ଦ ଦେଖି ଶ୍ୱଶୁର ତାକୁ ଆଶ୍ୱାସନା ଦେଇ କହୁଥିଲେ- "ବ୍ୟସ୍ତ ହୁଅନି ମା, ଇନ୍‌ଜୁରୀ ବେଶୀ ସିରିଅସ୍ ନୁହେଁ। ଟ୍ରିଟ୍‌ମେଣ୍ଟ ଚାଲିଛି।"

ସେ ସେହି ପିନ୍ଧା ଶାଢ଼ିରେ ବାହାରି ପଡ଼ିଲା ଯିବାକୁ। ଆରେ ଲିଜୁ... ଲିଜୁକୁ କିଏ ରଖିବ ! ଏତେ ଛୋଟ ପିଲାକୁ ସେଠିକି ନେବା ବି ଠିକ୍ ହେବନି। କିଏ ଜାଣେ ସେଠାକାର ଅବସ୍ଥା କ'ଣ ? କେତେ ସମୟ କି କେତେ ଦିନ ସେଠି ରହିବାକୁ ପଡ଼ିବ। ବଡ଼ ଯାଆ, ତା ମନକଥା ବୁଝିପାରିଲେ କି କ'ଣ କହିଲେ- "ତୁ ନିଶ୍ଚିନ୍ତରେ ହସ୍‌ପିଟାଲକୁ ଯା। ମୁଁ ତାକୁ ସମ୍ଭାଳି ନେବି। ତା' ପାଇଁ ଜମା ବ୍ୟସ୍ତ ହେବୁନି।" ଯା ଭିତରେ ଦେଢ଼ଶୁର ଗ୍ୟାରେଜ୍‌ରୁ ଗାଡ଼ି କାଢ଼ି ସାରିଲେଣି। ସାନ ନାନୀ (ଦ୍ୱିତୀୟ ଯାଆ) ମଧ୍ୟ ବ୍ୟାଗ୍ ଖଣ୍ଡିରେ ଆବଶ୍ୟକ ଜିନିଷ ଧରି ଯିବାପାଇଁ ପ୍ରସ୍ତୁତ। ଗାଡ଼ି ଚାଲିଲା ହସ୍‌ପିଟାଲ ଅଭିମୁଖେ। ରାସ୍ତାସାରା ଲୋରା ଗାୟତ୍ରୀ ଓ ମହାମୃତ୍ୟୁଞ୍ଜୟ ମନ୍ତ୍ର ଜପ କରୁଥାଏ। ନାନୀ ତାକୁ ସାହସ ଦେଉଥାନ୍ତି- 'ବ୍ୟସ୍ତ ହନା, ସବୁ ଠିକ୍ ହୋଇଯିବ।'

ଗାଡ଼ି ରହିଲା ହସ୍‌ପିଟାଲ ଆଗରେ। ଟ୍ରମା କେୟାର ସେଣ୍ଟର ଠାବ କରି ଦେଢ଼ଶୁର ସମସ୍ତଙ୍କୁ ନେଇଗଲେ ସେଇଠିକି। ବୁଝାବୁଝି କରି ସମସ୍ତେ ପହଞ୍ଚିଲେ ଲୋରାର ବାପା, ମାଙ୍କ ପାଖରେ। ଧାଇଁ ଯାଇ ଶ୍ୱଶୁର ବାପାଙ୍କୁ କୁଣ୍ଢେଇ ପକେଇଲେ। ସେ ମଧ୍ୟ ମା'ର ହାତଧରି ସୁଁ ସୁଁ ହେଲା। ବାପାଙ୍କ ବାମ ହାତରେ ମଲ୍ଟିପୁଲ ଫ୍ରାକ୍‌ଚର ହୋଇଛି। ଆଣ୍ଠୁରେ ଭୀଷଣ ମାଡ଼। ମା'ର ମୁଣ୍ଡ ଫାଟି ଚାରିଟା ଷ୍ଟିଚ୍ ପଡ଼ିଛି। ପାଦ ମକଚି ହୋଇ ବେଙ୍ଗ ପରି ଫୁଲିଛି। ତଥାପି ଭଗବାନଙ୍କୁ ସମସ୍ତେ ଧନ୍ୟବାଦ ଦେଉଥିଲେ, ବିପଦ ଅଳ୍ପକେ ଟଳିଛି। ସେମାନଙ୍କୁ ଦେଖି ବାପା ମା'ଙ୍କର ମନରେ ବୋଧେ ଟିକେ ସାହାସ ଆସିଲା। ଦେଢ଼ଶୁର ପ୍ରେସ୍‌କ୍ରିପ୍‌ସନ୍ ନେଇ ମେଡ଼ିସିନ୍ କିଣିବାକୁ ଚାଲିଗଲେ। ଶ୍ୱଶୁର ଡକ୍ଟରମାନଙ୍କ ସାଙ୍ଗରେ କଥାବାର୍ତ୍ତା କଲେ। କୌଣସି ଅସୁବିଧା ନ ଥିବାରୁ ସେମାନେ ବାପା, ମା'ଙ୍କୁ କାଲି ସନ୍ଧ୍ୟାରେ ଡିସ୍‌ଚାର୍ଜ କରିଦେବେ ବୋଲି କହିଲେ।

ଏବେ ଫେରିବା ପର୍ବ। ମା ପାଖରେ ଜଣେ ଲେଡ଼ି ଆଟେଣ୍ଡାଣ୍ଟ ରହିବା ଜରୁରୀ। ସାନ ନାନୀ କହିଲେ- "ଲିଜୁ ଘରେ ଅଛି। ଲୋରା ତୁ ପଳା। ମୁଁ ମଉସା, ମାଉସୀ ଉଭୟଙ୍କ କଥା ବୁଝିନେବି।" ଶ୍ୱଶୁରଙ୍କର ଏକା ଜିଦ୍। ଆସନ୍ତା କାଲି ଡିସ୍‌ଚାର୍ଜ ହୋଇ ବାପା ମା ଯେମିତି ସିଧା ତା ଶାଶୁଘରକୁ ଯାଆନ୍ତି। ଏ ଅବସ୍ଥାରେ ଜଣେ ଅଜଣା ଚାକର ପିଲା

ହେପାଜତରେ ସେ କେବେ ବି ସମୁଦି, ସମୁଦୁଣୀଙ୍କୁ ଏକଲା ଛାଡ଼ି ଦେଇପାରିବେନି। ଟିକେ ସୁସ୍ଥ ହେଲାପରେ ଯାଇ ଯୋଉକଥା। ଶ୍ୱଶୁରଙ୍କ କଥା କାଟିବାକୁ ବାପାଙ୍କର ଜୁ ନ ଥିଲା। ଝିଅ ଶାଶୁଘରେ ପୁଣି ଏତେଦିନ! କୁନ୍ଥୁକୁନ୍ଥୁ ହୋଇ ହଁ ମାରିଲେ ସେ। ଲୋରା ମନ ଖୁସ୍। ଏଥରକ ସେ ନିଶ୍ଚିନ୍ତରେ ଫେରିପାରିବ।

ବେଲୁନ୍‌ପରି ଏକ ହାଲ୍‌କା ମନନେଇ ଘରକୁ ଫେରିଲା ଲୋରା। ଏତେ ବ୍ୟସ୍ତତା ଭିତରେ କିଛି ସମୟପାଇଁ ସେ ତ ଲିଜୁ କଥା ପୁରାପୁରି ଭୁଲିଯାଇଥିଲା। ଫେରିବା ବାଟରେ ଲିଜୁ କଥା ଘାରୁଥିଲା ତାକୁ। ଘରେ ପହଞ୍ଚି ଦେଖିଲା ବଡ଼ ନାନୀ ତାକୁ କାଖରେ ଧରି ଠିଆ ହୋଇଛନ୍ତି। ସେ ତା ଖନି ଖନି ଭାଷାରେ କ'ଣ ଗୁଡ଼େ କହି ତାଳି ମାରୁଛି। ଦଉଡ଼ିଯାଇ ଲୋରା ତା ଆଗରେ ହାତ ପ୍ରସାରିଲା। ବେଙ୍ଗଛୁଆ ପରି ଫଙ୍କ୍ କରି ଲିଜୁ ଡେଇଁ ପଡ଼ିଲା ତା କୋଳକୁ। ଅଜସ୍ର ଚୁମ୍ବନରେ ପୋତି ପକେଇଲା ଲୋରା ତା ପୁଅକୁ। ଆଖିରେ ଅଶ୍ରୁ। କିଛି ସମୟ ତା ପାଖରେ ଗେହ୍ଲା ହୋଇ ଲିଜୁ ପୁଣି ସର୍‌ର୍ କରି ଖସି ଆସିଲା ତଳକୁ। ଆରେ ଏ କ'ଣ! ଏ ଯୋଡ଼ିକ କିଏ? ବେକ ପଛପଟେ ନାଲି ଗାମୁଛା ଭିଡ଼ି, ଫୁଲ ପ୍ୟାଣ୍ଟ ଉପରେ ଚଡ଼ି ପିନ୍ଧି ପୁତୁରା ସ୍ପାଇଡରମ୍ୟାନ୍ ଓ ହାତ ପାଦରେ କଳା ମୋଜା ପିନ୍ଧି, ଫ୍ରକ୍ ପଛପଟେ ଦଉଡ଼ିରେ ଲାଞ୍ଜକରି ଝିଆରି ମେଣ୍ଟାଲ ମଙ୍କି (ପାଗଳ ମାଙ୍କଡ଼) ଅବତାରରେ। ଆଉ ଲିଜୁ ସେମାନଙ୍କୁ ଦେଖି ସେମାନଙ୍କ ସହ ଫୁକୁଲ ଫୁକୁଲ ଡେଉଁଥାଏ ଖୁସିରେ। ଆଃ! କି ଆନନ୍ଦ। କି ପୂର୍ଣ୍ଣତା ସତରେ। ଏତେ ପୁଲକ, ଏକୁଟିଆ କେରଳର ବ୍ୟାକ୍ ୱାଟର୍ ରାଇଡିଙ୍ଗରେ କ'ଣ ସେ ପାଇପାରିଥାନ୍ତା। ଯା' କହିଲେ ଶୀଘ୍ର ଧୁଆଧୋଇ ହେଇ ଆସ୍, କ'ଣ ଯୋଡ଼େ ଖାଇଦେବୁ। ମୁହଁ ଶୁଖିଗଲାଣି। ଶାଶୁ ଆସି ପଣତରେ ମୁହଁ ପୋଛିଦେଇ ମଥା ସାଉଁଳି ଦେଲେ। ତାଙ୍କ ହାତ ପରଶରେ ଯେମିତି ତରଳି ଯାଉଥିଲା ଲୋରା। ପଣତରେ ଥିଲା ଅନନ୍ୟ ଏକ ମହକ, ଯାହା ଚହଟି ଯାଉଥିଲା। ତା ହୃଦୟରେ। କେଉଁ ଦୁର୍ମୁଲ୍ୟ ଅତରରୁ ବା ସେ ପାଇପାରିବ ଏ ଆତ୍ମୀୟତାର ମହକ। ସତରେ ସେ କେଡ଼େ ଭାଗ୍ୟବତୀ। ଏତେ ଶ୍ରଦ୍ଧା, ଏତେ ଆପଣାପଣ କ'ଣ ସମସ୍ତଙ୍କୁ ମିଳେ? ସାରା ପରିବାରଟି ଯେ କେତେ ଯତ୍ନବାନ୍, କେତେ ସଚେତନ ତା ପାଇଁ। ହେଲେ ସେ ମୂର୍ଖ ହାତରେ ହୀରା ପାଇଁ କାଚ ଭାବୁଥିଲା ଏତେଦିନ ଧରି। ଆଜି ଯେ ଏକ ସୁନ୍ଦର ଉପଲବ୍ଧିର ଦିନ ତା ପାଇଁ। ଏହି ମହକିତ ମୁହୂର୍ତ୍ତଟି ବୋଧହୁଏ ସାରାଜୀବନ ତାକୁ ମହକିତ କରି ରଖିଥିବ।

ମମତାରାଣୀ ଆଚାର୍ଯ୍ୟ
ଦାମନଯୋଡ଼ି

ଓଡ଼ିଆ ଝିଅ ଭଲ

ଓହୋ କି ଥଣ୍ଡା। ଶୀତରେ ଦେହ ଥରି ଯାଉଛି ଗୋ ଦିଦି, ଚା ଟିକେ ପଡ଼ିଲେ କାମ କରିବି, କହି ତର ତରରେ ଘର ଭିତରକୁ ମାଡ଼ି ଚାଲିଲା ବାସନ୍ତୀ।

ନୂଆ ନୂଆ ଦୁଇଦିନ ହେବ ଘରକୁ ଆସୁଛି। ରାତିର ରୁଟି ସହିତ ଚାହା ଟିକେ ଦେଉ ଦେଉ ପଚାରିଲି, ସକାଳୁ କ'ଣ ଖାଇଚୁ?... ନାଇଁ ଦିଦି ସକାଳୁ ଦାନ୍ତକାଠିଟା ବୁଲେଇ ଦେଇ ଆସୁ ଆସୁ ଏତିକି ବେଳ। କୋଉ ଦିନ ଚା ଟିକିଏ ଦିଅନ୍ତି କି ନ ଦିଅନ୍ତି। ପେଟକୁ ଶୁଖେଇ ଶୁଖେଇ ଦିନ ଦୁଇଟା ବେଳ ପର୍ଯ୍ୟନ୍ତ ରହିବା ଅଭ୍ୟାସ ହୋଇଗଲାଣି।

ହେଲେ ଦିଦି, ଡାକ୍ତରାଣୀ ଦିଦିଟା ଭାରି ଭଲ। ଭାତ, ଡାଲି, ଶାଗ, ମୁଗ ଯାହା ତା'ର ଘରେ ଥିବ ମତେ ଖାଇବାକୁ ଦିଏ। କଥା କହି କହି କାମ କରି ଚାଲିଥାଏ।

ତା' ପରଦିନ ଚା ଦେଲାବେଳେ ଜଳଖିଆ ଟିକିଏ ଖାଇଦେବା ପାଇଁ କହିଲି... ନେ ଖାଇଦେ। ତା' ପରେ କାମ କରିବୁ। "ନାଇଁ ଦିଦି ଖାଇବାକୁ ବେଳ ନାଇଁ, ଜରିରେ ପୁରାଇ ଦେଇ ଦିଅ କାମ ସରିଲେ ଖାଇବି।"

ହେଲେ ଚା ପିଇଲାବେଳେ ତା ଘର କଥା ପଚାରିଲି। ଟିକେ ଚାହିଁଲା ମୋ ମୁହଁକୁ। ତା'ପରେ ହସି ହସି କହି ଚାଲିଲା... ମୋର ସ୍ୱାମୀ, ଦୁଇ ପୁଅ, ଦୁଇ ବୋହୂ, ନାତି, ନାତୁଣୀ ଚାରିଟା।

ସବୁ ଏକାଠି ରହୁଛୁ?

ଦିଦି ଖାଲି ଏକାଠି ରହୁନୁ। ମୁଁ ଏକୁଟିଆ ସମସ୍ତଙ୍କୁ ପୋଷୁଛି। ଏତିକି କହି କାମ ଛାଡ଼ିଦେଇ ଥକାମାରି ବସିପଡ଼ିଲା। ତା ମୁହଁର ହସ ଟିକକ ପାଣିଫୋଟକା ପରି କୁଆଡ଼େ ଉଭେଇ ଯାଇଥିଲା। ଆଖି ଗୁଡ଼ିକ ଛଳ ଛଳ ଦେଖା ଯାଉଥିଲା। ବାଷ୍ପରୁଦ୍ଧ କଣ୍ଠରେ କହିଲା... ସ୍ୱାମୀ ରିକ୍ସା ଟାଣୁଥିଲା, ଏକ୍ସିଡେଣ୍ଟ ପରେ ଆଉ କାମ କରୁନି, ଘରେ ବସିଛି। ପୁଅ ଦୁଇଟାକୁ ଯେତେ ଜୁହାର, ମୁଣ୍ଡିଆ ମାରିଲି ଗୋ ଦିଦି ପାଠ ଟିକିଏ ପଢ଼ିବା ପାଇଁ, ଦଶମ ଫେଲ ହେଇ ଆଉ ପାଠ ପଢ଼ିଲେନି।

ଏବେ ତ ଇସ୍କୁଲ୍‌ରେ ଖାଇବାକୁ, ଡ୍ରେସ୍, ବହି ସବୁ ମାଗଣାରେ ମିଳୁ ଛି। ହେଲେ, ସେତେବେଳେ ନ ଥିଲା। ବାରଘରେ କାମକରି ବହିପତ୍ର କିଣି ଦେଉଥିଲି। ହେଲେ ପାଠ କାଇଁ ପଢ଼ିଲେ ଯେ...। କିଛି କାମ ହେଲେ କରୁ ନାହାନ୍ତି। ନିଜେ ଭଲ ପାଇ ବାହାହୋଇ ବୋହୂ ଗୋଟିଏ ଗୋଟିଏ ଘରକୁ ଧରି ପକେଇ ଆସିଲେ।

ଚୁପ୍ ଚାପ ମୁଁ ବାସନ୍ତୀ ମୁହଁକୁ ଚାହିଁ ରହିଥିଲି। ବିଷର୍ଣ୍ଣ ବଦନରେ ଘର ପୋଛାରେ ଲାଗିପଡ଼ିଲା। ବାଲ୍‌ଟିର ମଇଳା ପାଣିକୁ ଢାଳିଦେଇ ସଫା ପାଣି ଭରିବା ଭିତରେ ସତେ ଯେମିତି ତା'ର ଦୁଃଖଭରା ହୃଦୟରେ ସତେଜତା ଭରି ଯାଇଥିଲା। ପୁଣି ଚିହିଁକି ଉଠି କହିଲା, ହେଲେ ମୋର ଝିଅଟା ଦଶମ ପାସ୍ କରିଛି ଗୋ ଦିଦି।

ତୋର ଗୋଟେ ଝିଅ ମଧ୍ୟ ଅଛି ?

ହଁ ବାହାଦେଇ ଦେଲିଣି। କହିବା ସମୟରେ ଫୁଲଦାନୀରେ ପ୍ଲାଷ୍ଟିକ୍ ଫୁଲଗୁଡ଼ିକୁ ଯତନରେ ଆଉଁଷି ଝାଡ଼ି ଦେଉଥିଲା। ଲାଗୁଥିଲା ସତେ ଯେପରି ଫୁଲ ଭିତରେ ତା ଝିଅକୁ ଆଉଁଷି ଦେଉଛି।

ସିଏ ଗଲାପରେ କାହିଁକି କେଜାଣି ତା'ର କଥା ଗୁଡ଼ାକ ମନ ଭିତରେ ଗୋଳେଇ ହେଉଥାଏ। ମନକୁ ମନ କହୁଥାଏ। ହଜାର ହଜାର ବାସନ୍ତୀର ଦୁଃଖୀ ପରିବାର ଏମିତି ଦୁନିଆରେ ଚଳୁଛନ୍ତି, ମୁଁ ଏଥିରେ ଏତେ ବିଚଳିତ କାହିଁକି ହେଉଛି ?

ବାସନ୍ତୀର ନିତିଦିନିଆ ଅଭ୍ୟାସ ହୋଇଗଲା କାମ କରୁ କରୁ ଘର କଥା କିଛି ଦୁଃଖ ସୁଖ ମୋ ସହିତ ବାଣ୍ଟିବା ପାଇଁ। ବୋଧେ ତା'ର ସଂସାର ପସରା ଖୋଲିବାକୁ କେତେ ଦିନରୁ ଗ୍ରାହକଟିଏ ଖୋଜୁଥିଲା।

ମୋ ଜ୍ୱାଇଁପୁଅ ଦିଲ୍ଲୀରେ କାମ କରୁଛି ଦିଦି। ମୁଁ ଆଶ୍ଚର୍ଯ୍ୟ ହୋଇ ପଚାରିଲି – ଦିଲ୍ଲୀରେ ?

ଝିଅର ଶାଶୁଘରଟା ବିହାରରେ। ଶାଶୁଘର ଗାଁରେ ଝିଅ ଅଙ୍ଗନବାଡ଼ିରେ ପାଠ ପଢ଼ଉଛି। ତା' ଶାଶୁ, ଶ୍ୱଶୁର ପାଖରେ ଅଛନ୍ତି। ଜ୍ୱାଇଁ ଆଉ ତା'ର ଭାଇ ଦିଲ୍ଲୀରେ କାମ କରୁଛନ୍ତି। ଗୋଟିଏ ମାସରେ ଜ୍ୱାଇଁ ଆସିଲେ, ଆର ମାସରେ ତା'ର ଭାଇ ଘରକୁ ଆସି ବୁଲିକରି ଯାଉଛନ୍ତି। ମୋ ଝିଅ ବହୁତ ଭଲରେ ଅଛି।

ହେଲେ ଦିଦି, ଏତେ ଦୂରରେ ଦେଲି ଯେ, ଇଚ୍ଛାକଲେ ଝିଅକୁ ଦେଖିପାରୁନି। ଯୌତୁକ ଦେଇ ପାରିବିନି ବୋଲି ଝିଅକୁ ବିହାରରେ ବାହାଦେଲି।

ସେମାନେ କ'ଣ ପାଇଁ ଯୌତୁକ ନେଲେ ନି ?

ନାଇଁ, ଆମ ଓଡ଼ିଆ ଲୋକ ହେଇଥିଲେ, କଂସା ବାସନ ଦି ସେଟ୍, ବାଇକ୍, ସୁନା, ରୂପା ସାଙ୍ଗକୁ ନଗଦ ଲକ୍ଷେ ଟଙ୍କା ଦେବାକୁ ପଡ଼ିଥାନ୍ତା। ଏବେ କାନକୁ ହଳେ ଆଉ ନାକରେ ପିନ୍ଧିଥିଲା। ସେତିକି। ତାଙ୍କ ଲୁଗାରେ ବାହା କରି ନେଇଗଲେ। ଝିଅ ଭଲରେ ଅଛି।

ଆଚ୍ଛା, ତୋର ବିହାରରୁ ପ୍ରସ୍ତାବ ଆସିଲା କେମିତି କହିଲୁ ?

ଦିଦି, ଆମ ବନ୍ଧୁ ଭିତରେ କେତେ ଝିଅ ସେପଟେ ଦେଲେଣି। ଆମ ଦେଢ଼ଶୁର ମଧ୍ୟ ଯୌତୁକ ଦେଇ ପାରିବେ ନି ବୋଲି ସେପଟେ ଦେଇଛନ୍ତି।

ତା କଥା ଶୁଣିବା ପାଇଁ ମୋର ଉତ୍କଣ୍ଠା ଦେଖି ସେ ଆବେଗଭରା କଣ୍ଠରେ ଗଡ଼ ଗଡ଼ ହୋଇ ଗପି ଯାଉଥାଏ ମତେ ଲାଗୁଥିଲା। ମୁଣ୍ଡରେ ଧରି ବୁଲୁଥିବା ଗୋଡ଼ି, ପଥର ଟୋକେଇରୁ କିଛି ବାହାର କରି ମୋ ହାତକୁ ବଢ଼େଇ ଦେଇ ଟିକିଏ ହାଲୁକା ଅନୁଭବ କରୁଛି। ମୁଁ ବି ନିଜେ ବୁଝି ପାରୁ ନଥାଏ, ତା'ର ଅଦରକାରୀ ଗୋଡ଼ି, ପଥର ଗୁଡ଼ାକୁ ମୁଁ କାହିଁକି ହାତ ବଢ଼େଇ ଧରୁଛି।

ଆଲୋ ବାସନ୍ତୀ, ବିହାରରେ କ'ଣ ଝିଅ ମିଳୁ ନାହାନ୍ତି, ବାହା ହେବାକୁ। ସେମାନେ ବିନା ଯୌତୁକରେ ଗରୀବ ଓଡ଼ିଆ ଝିଅମାନଙ୍କୁ ବାହା ହେଉଛନ୍ତି।

ହଁ ଦିଦି, ଝିଅ ମିଳୁଛନ୍ତି। ହେଲେ, ସେମାନେ କହୁଛନ୍ତି, 'ଓଡ଼ିଆ ଝିଅ ଭଲ।" ବିହାର ଓ ଦିଲ୍ଲୀରେ ଓଡ଼ିଆ ଝିଅଙ୍କୁ ବେଶି ଚାହୁଁଛନ୍ତି ଗୋ ଦିଦି। ଖାଲି କହୁଛନ୍ତି, ଆମ ଝିଅଠୁଁ ଓଡ଼ିଆ ଝିଅ ଭଲ। ଘର, ପରିବାକୁ ଆଦର ଯତନ ଭଲ କରୁଛନ୍ତି।

ବାସନ୍ତୀ ସିନା କାମ କରୁ କରୁ କଥା କହି ଚାଲିଗଲା, ହେଲେ ଦିନସାରା ମୁଁ କାମରେ ବ୍ୟସ୍ତ ଥିଲେ ସୁଦ୍ଧା, ପ୍ରତିଟି ମୁହୂର୍ତ୍ତରେ ମୋ କାନ ପାଖରେ ପ୍ରତିଧ୍ୱନିତ ହୋଇ ଶୁଭୁଥିଲା... "ଓଡ଼ିଆ ଝିଅ ବେଶି ଭଲ।" ରାତିରେ ଶୋଇ ଶୋଇ ଭାବୁଥିଲି, ଅନ୍ୟ ରାଜ୍ୟର ଲୋକେ ଯାହା କହୁଛନ୍ତି, ତାହା ସତ ନା, ସତ ଆଉ କିଛି ?

କମଳ ସାହୁ, ଅନୁଗୁଳ

A True Man

A man is not a MAN
By virtue of sizes and strength...
Nor by fair a skin..
Nor the bulk of his spills..
Neither is his manhood
By baritone a voice..
Nor wealth amassed,
A measure of his skill.
If honest his heart
And purest in intent,
He stands by his words,
And is lauded for his deeds...
His eyes a twinkle of laughter
Life, fearlessly lived...
There's a MAN to die for –
Or live, albeit moments, with !

Debjani Mishra, Bhubaneswar

Be a Goal Digger

Girl Power – Should; Would; Could; Did - "Be a goal digger".

Anshika Routray, a rising shot put player of Odisha, has gathered many accolades to her credit in State and national level. She is the daughter of Anuradha Biswal, the first Olympian lady to represent Odisha in the Asian Championship in Jakarta and win a bronze medal – An Indian track and field athlete, and working as Deputy Manager (Sports) in Nalco at its Corporate Office at Bhubaneswar. Her father Shri Premananda Routray, a body builder and state level champion. Anshika studies in Class X in Sai International School, Bhubaneswar. Team Sanginee met Anshika and interacted on her achievements and future plans.

Sanginee: How and when did you take up this sport and who is your inspiration?

Anshika: Actually, from a very early age, say at the age of 5, I first started playing lawn tennis. In fact with my inner instincts and the motivation of my parents I switched to shooting sports and thought of trying shot put. With relentless support of my parents and my school teachers, my confidence increased. I finally chose shot put as my passion and determined to achieve records.

Sanginee: Please tell us something about your early achievement in this field.

Anshika: My very first competition was at the State Level, in the under-14 group Girls' category. In shot put, I created a record of a distance of 8.25 M and broke the previous record of 7.35 M. Again, in the same category, I created a national record by throwing shot put to a distance of 11.45 M and broke the previous record of 11.23 M, held in Karnataka. Later, in the under-16 group Girls Category again, I achieved another record by throwing the shot put to a distance of 11.82 M breaking the previous record of 10.63 M.

Sanginee: Wow, congratulation! Now, a very important question- As a girl child, have you faced any kind of hurdle or discrimination in the society or in your sports practice/field?

Anshika: No, never. I can very proudly say that being the child of parents from the sports background, my mother herself is a champion and father, a body builder they have never stopped me from following my dream. Rather my parents and teachers have taught me techniques and advised me on my diet. I take fresh fruits and dry carbohydrates. As my mother herself is a sports person she plans a proper balanced diet for me.

Sanginee: What advice would you give to our upcoming sports stars?

Anshika: I would advise them to respect their passion, work hard and do rigorous workouts. Try to achieve the confidence and support of parents as without them nothing is possible. I also request the parents to allow their children to pursue their passion and encourage them in their endeavours.

Sanginee: Who is your coach and is there any international sportsperson who inspires you?

Anshika: My mother is my coach and great inspiration. But yes, at International level, I am greatly inspired by ADAMS.

Sanginee: Finally, what are your plans for the future?

Anshika: Now, in the senior category under-16 age group, my first target is to create a new record at the National level. I also aspire to participate in various international competitions like Youth Asian Championship, Youth Olympics, and even in Junior Commonwealth Games.

Sanginee: Being a 10th Standard student, how do you plan to balance your passion and studies?

Anshika: Till now, I have been able to maintain a balance between sports and studies. I am a scholar's badge holder in my studies and would like to maintain it. My parents as highly successful sports persons continue to inspire and guide me to achieve my goals and realise my dreams. I am confident I can continue to do justice to both academics and sports with their unwavering support.

Sanginee: What kind of diet do you follow to stay fit for sports?

Anshika: Since more power and strength is needed for sports, I follow a protein rich diet.

Sanginee: We wish you all the best in your future endeavours Anshika and hope that you continue to make us all proud just as you have so often done.

Anshika: Thank you. I give full credit to my lovely parents and grandparents. I am grateful to my Principal and Vice-Principal for granting me special leave from School to participate in championship. I am also thankful to the Odissa Olympic Association & Sports Department, Odisha, for their support. Being a child of NALCO family, I feel privileged as I have been felicitated by our CMD, Dr. Tapan Kumar Chand and Madam Smt. Preeti Roy Chand with the Upcoming Sports Talent Award. I express my gratitude to our beloved Chief Minister Shri Naveen Patnaik who has also felicitated me for being an outstanding sportsperson. I am thankful to the Nalco Management for providing me a proper cemented court for practice.

Interview by
Reetu Kumar, Bhubaneswar

Touching Lives

Nalco Mahila Samiti, Bhubaneswar has been rendering social services in and around Bhubaneswar. Similarly, Nalco Ladies Clubs at Damanjodi and Angul are also actively contributing their services in and around the plants and townships. It has been the endeavor of these bodies to reach out to the people of all age groups of all sections of our society. Here is a glimpse of activities and achievements of NMS.

At Bhubaneswar

Celebrating Republic Day at Siripur Ashram School

Sharing colours and joy- Holi: the festival of colours

"After women flowers are the most divine creation"- During Basanta Pushpa Pradarshani

Programme on stress buster by Sri Arun Tishi

Release of 9th edition of **Sanginee** in the august presence of Padmashree Manoj Das & Dr. Tapan Kumar Chand

"Sharing and caring"- Distribution of blankets at Old age home

At Damanjodi

Distribution of emergency lights at Kunduli Ashram

Distribution of matresses at Ex Board High School, Mathalput

Pre Holi celebration

Ikebana : Art of flower arrangement

At Angul

Patriotism in every act

Splash the world with colour

Promoting culture and tradition

Partnership in social responsibility

Readers are requested to send their suggestions and feedback to **nmssangini@gmail.com**.
Write ups in clear handwriting or soft copy should reach the Coordinator before 10th May 2019. **- Editor**

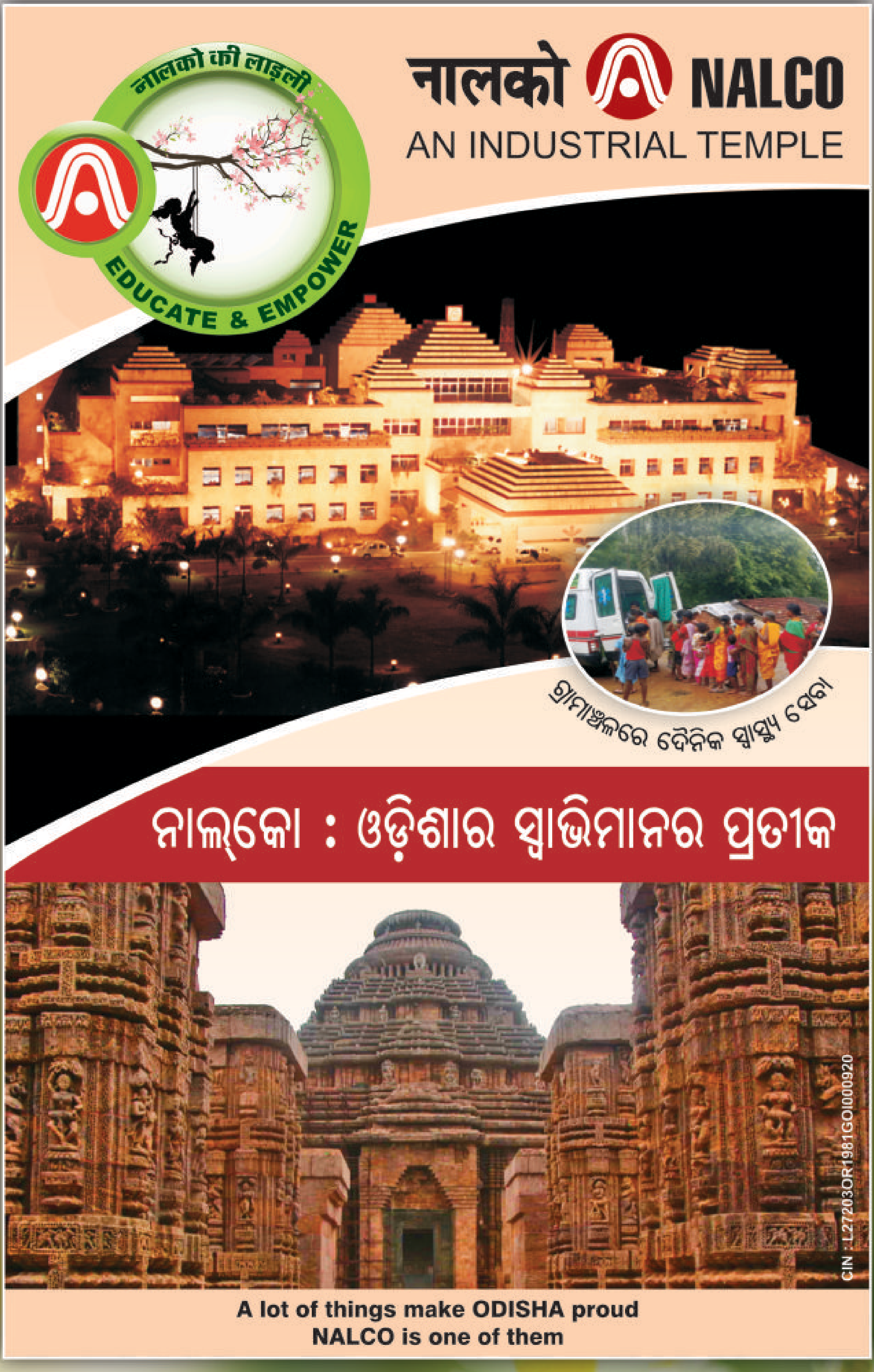

नालको की लाड़ली
EDUCATE & EMPOWER
नालको NALCO
AN INDUSTRIAL TEMPLE
ଗ୍ରାମାଞ୍ଚଳରେ ଦୈନିକ ସ୍ୱାସ୍ଥ୍ୟ ସେବା
ନାଲ୍କୋ : ଓଡ଼ିଶାର ସ୍ୱାଭିମାନର ପ୍ରତୀକ
CIN : L27203OR1981GOI000920
A lot of things make ODISHA proud
NALCO is one of them